वैदिक ज्ञान माला

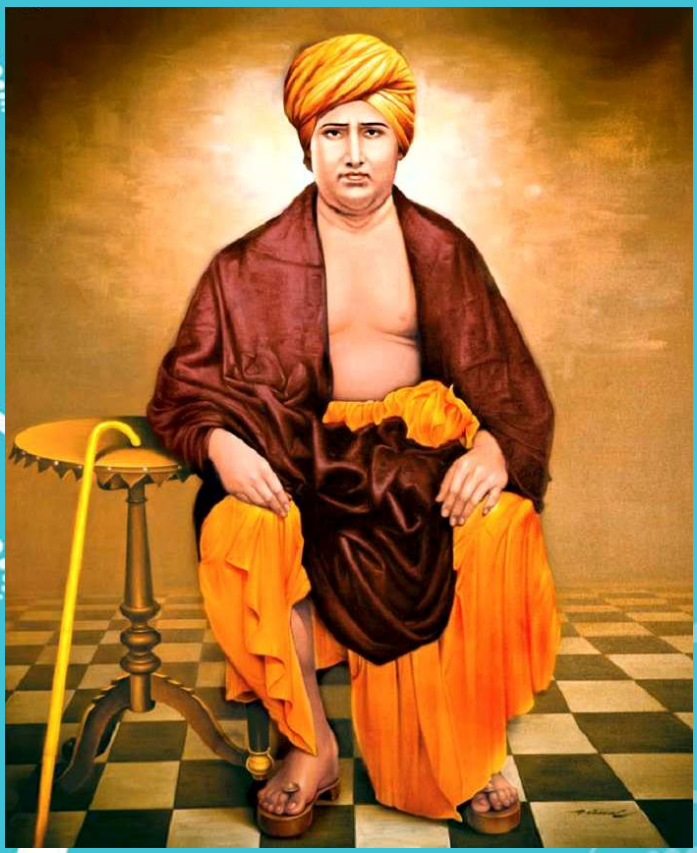

महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825–1883)

कृष्ण चंद्र गर्ग

वैदिक ज्ञान माला

लेखक :

कृष्ण चन्द्र गर्ग

पूर्व गणित प्राध्यापक (भारत में तथा अमेरिका में)

आर्य समाज

सैक्टर 9, पंचकूला। फोन : 0172-2575024, 3585170

सर्वाधिकार सुरक्षित : लेखक

मूल्य : 50 रूपये

प्रकाशनः जून 2022

Printer: Vasu Enterprises
Plot No. 136-140/52,
Industrial Area, Phase - 1
Chandigarh 160002
Tel.: 0172-4618586

भूमिका

आम आदमी की पहुँच वैदिक ग्रंथों – वेद, उपनिषद्, मनुस्मृति, दर्शन शास्त्र आदि तक नहीं होती। यदि होती भी है तो उनको पढ़ना और समझना उनके बस की बात नहीं होती। इसी बात को ध्यान में रखकर 'वैदिक ज्ञान माला' पुस्तक लिखी गयी है। उपर्युक्त ग्रंथों से कुछ महत्त्वपूर्ण बातें लेकर पुस्तक में डाली गयी हैं। भाषा सरल हिंदी रखी गयी है। जहाँ जहाँ मूल संस्कृत दी गयी है वहाँ वहाँ उसका हिंदी अनुवाद भी दे दिया गया है। साधारण हिंदी जानने वाले पाठकों को इसे पढ़ना और समझना कठिन नहीं होगा।

वेद मानव संस्कृति के मूल ग्रन्थ हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद – तीनों वेदों से कुछ महत्त्वपूर्ण मंत्र अर्थसहित पुस्तक में दिए गए हैं। अध्यात्मवाद पर संसार में सबसे अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ उपनिषद् हैं। पुस्तक में दस उपनिषदों की सारगर्भित बातें सरल हिंदी भाषा में दी गयी हैं। समाज को समुचित ढंग से व्यवस्थित रखने के लिए महर्षि मनु द्वारा रचित मनुस्मृति सर्वोत्तम ग्रन्थ है। मनुस्मृति की मुख्य मुख्य बातें संस्कृत-हिंदी सहित पुस्तक में उपलब्ध हैं। वैदिक साहित्य में छह दर्शनों का विशेष स्थान है। इन छह दर्शनों में से भी कुछ बातें पाठकों की जानकारी के लिए पुस्तक में दी गयी हैं। संसार में जितनी भी रामायणें उपलब्ध हैं उन सबका मूल बाल्मीकि रामायण है। पुस्तक में बाल्मीकि रामायण से भी बहुत सी बातें हिंदी भाषा में दी गयी हैं। इनके अलावा चाणक्यनीति, गीता, विदुरनीति, महाभारत आदि ग्रंथों से भी कुछ चयनित महत्त्वपूर्ण बातें संस्कृत-हिंदी में दी गयी हैं। कुछ और सत्य और व्यावहारिक बातों का भी पुस्तक में समावेश किया गया है। 'वैदिक ज्ञान माला' पुस्तक आम आदमी के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी- ऐसी पूर्ण आशा है।

पंचकूला, हरयाणा — कृष्ण चंद्र गर्ग

जून 2022 — **Email : kcg831@yahoo.com**

समर्पण

महाशय कुन्दनलाल, धूरी, पंजाब (1908–1996)

महाशय कुन्दनलाल जी मेरे फूफा थे। वे सत्य और सात्विकता की मूर्ति थे। आर्यत्व उनके जीवन में ओतप्रोत था। मेरा सौभाग्य था कि कुमार अवस्था में चार वर्ष तक मुझे उनके सान्निध्य में रहने का अवसर मिला। उसी दौरान मैं पौराणिकता के अज्ञान अन्धकार से निकलकर वैदिक ज्ञान प्रकाश की ओर अग्रसर हुआ। मैं आजीवन उनका ऋणी रहूँगा। यह पुस्तक उन्हीं को सादर समर्पित है।

कृष्ण चंद्र गर्ग

वैदिक ज्ञान माला
अनुक्रम

अध्याय - 1. **वेदों के महत्त्वपूर्ण उपदेश**
ऋग्वेद ---------- 7
यजुर्वेद ---------- 11
अथर्वेद ---------- 15
अध्याय - 2. **उपनिषद् ज्ञान** ---------- 19
केन उपनिषद् ---------- 20
कठ उपनिषद् ---------- 20
प्रश्न उपनिषद्---------- 22
मुण्डक उपनिषद् ---------- 23
माण्डूक्य उपनिषद् ---------- 24
तैत्तिरीय उपनिषद् ---------- 24
ऐतरेय उपनिषद् ---------- 25
छान्दोग्य उपनिषद् ---------- 25
बृहदारण्यक उपनिषद्---------- 28
श्वेताश्वतर उपनिषद् ---------- 32
उपनिषदों पर महत्त्वपूर्ण टिप्पणियाँ ---------- 34
अध्याय - 3. **मनुस्मृति ज्ञान** ---------- 35
अध्याय - 4. **दर्शन शास्त्र ज्ञान**
न्याय और वैशेषिक दर्शन ---------- 45
सांख्य, योग, मीमांसा, वेदांत दर्शन ----------48
अध्याय - 5. **वाल्मीकि रामायण से** ---------- 53
अध्याय - 6. **महत्त्वपूर्ण श्लोक** ---------- 58

अध्याय - 7. **सामान्य ज्ञान**
महत्त्वपूर्ण बातें - 1 ---------- 62
महत्त्वपूर्ण बातें - 2 ---------- 67
महत्त्वपूर्ण बातें - 3 ---------- 73
महत्त्वपूर्ण बातें - 4 ---------- 79
महत्त्वपूर्ण बातें - 5 ---------- 84
महर्षि दयानन्द सरस्वती ---------- 88

वेदों के महत्त्वपूर्ण उपदेश

ऋग्वेद

1. य आध्राय चकमानाय पित्वोऽन्नवान्त्सन् रफितायोपजग्मुषे।
स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरोतो चित्स मर्डितारं न विन्दते।।

(ऋग्वेद 10.117.2)

अर्थ- जो व्यक्ति धनवान होते हुए भी दुर्बल को, गरीब को, अन्न मांगने वाले को और द्वार पर आए हुए भिखारी को नहीं देता और उसके सामने स्वयं खाने बैठ जाता है, वह इस बात को निश्चय रूप से जान ले कि आवश्यकता पड़ने पर उसे भी सुख देने वाला कोई नहीं मिलता।

2. पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान् द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम्।
ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुप तिष्ठन्त रायः।।

(ऋग्वेद 10.117.5)

अर्थ - धनवान को चाहिए कि वह मांगने वाले को अवश्य ही दे। उसे दूरदृष्टि रखनी चाहिए। हो सकता है कि कभी उसे भी दूसरों के सामने हाथ पसारना पड़े, क्योंकि धन रथ के पहिए की तरह घूमता रहता है, एक से दूसरे के पास जाता रहता है।

3. मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी।।

(ऋग्वेद 10.117.6)

अर्थ- हृदयहीन व्यक्ति के पास अन्न-धन का आना व्यर्थ ही है। सच कहता हूँ- वह धन उसका नाश करने के लिए ही उसके पास आया है क्योंकि वह न तो सज्जनों का पोषण करता है और न ही अपने साथी की सहायता करता है। ऐसा अकेला खाने वाला आदमी केवल पाप ही करता है।

4. उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः।
उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः।। (ऋग्वेद10.137.1)

अर्थ- हे विद्वानों! जो नीचे गिर गया है उसे तुम ऊपर उठाओं। जो व्यक्ति अपराध करके उसका दुष्फल भोग रहा है, मरे हुए के समान हो गया है उसे फिर जीवन प्रदान करो।

5. अकर्मा दस्युरभि नो अमन्तुरन्यव्रतो अमानुषः।
त्वं तस्याऽमित्रहन् वधर्दासस्य दम्भय।। (ऋग्वेद 10-22-8)

अर्थ- जो निक्कमे, अविचारषील, पापव्रती, मानवता के शत्रु दस्यु लोग हैं, उनके अत्याचार को, हे शत्रुहन्ता! तू मत पनपने दे।

संसार को बनाने वाला तथा पालने वाला ईश्वर सर्वज्ञ है, सर्वव्यापक है, सर्वान्तर्यामी है, सर्वशक्तिमान है और न्यायकारी है। वह हमारे सब कार्यों को देखता है और जानता है। संसार में रहते हुए जितना भला हम दूसरों का करते हैं, परमात्मा की व्यवस्था से उतना ही सुख हमें प्राप्त होता है और जितना बुरा हम दूसरों का करते हैं उतना ही दुःख हमें मिलता है। इसलिए सुख की इच्छा रखने वाले प्रत्येक मनुष्य को दूसरों का भला जितना हो सके, करना चाहिए, बुरा किसी का भी नहीं करना चाहिए।

6. ऋग्वेद में पासों से खेले जाने वाले जूए को आधार मानकर ही लिखा गया है। ऋग्वेद (10-34-1) के अनुसार जूए के पासे बहेड़े के वृक्ष की लकड़ी से बने होते हैं।

7. द्वेष्टि श्वश्रूः अप जाया रुणद्धि न नाथितः विन्दते मर्डितारम्।
अश्वस्य इव जरतो वस्न्यस्य न अहं विन्दामि कितवस्य भोगम्।।

(ऋग्वेद 10.34.3)

अर्थ- जूआ खेलने वाले पुरुष की सास उससे द्वेष करती है और उसकी पत्नी उसे छोड़ देती है। भिखारी बनकर वह किसी से कुछ मांगता है, पर कोई भी उसे धन नहीं देता। जैसे बूढ़े घोड़े का कोई मूल्य नहीं डालता ऐसे ही जुआरी मनुष्य भी सुख और आदर नहीं पाता।

8. यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽव हीये सखिभ्यः।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रतँ एमीदेषां निष्कृतं जरिणीव।

(ऋग्वेद 10.34.5)

अर्थ- जब भी मैं मन से निश्चय करता हूँ कि अब मैं इन पासों से नहीं खेलूंगा, फेंके जाने वाले ये लाल-पीले पासे मुझे बुलाते हैं और मैं जहां ये खेले जाते हैं

वहां पहुँच जाता हूँ जैसे पुरुष वेश्या के कोठे पर चला जाता है।

9. अक्षासः इदङ्ककुषिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणो मध्वा संपृक्ताः कितवस्य बर्हणा।।

(ऋग्वेद 10.34.7)

अर्थ- पराजित होने पर ये पासे अंकुश के समान चुभते हैं, वाण की तरह छेदते हैं, छुरे के समान काटते हैं और परिवार जनों को दुःख देते हैं। जीतने पर जुआरी के लिए ये पासे पुत्र-जन्म के समान आनन्ददायक होते हैं और हारने पर उसका नाश ही कर देते हैं।

10. नीचा वर्तन्त उपरि स्फुरन्तयहस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते।
दिव्या अंगाराः इरिणे न्युप्ताः शीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति।।

(ऋग्वेद 10.34.9)

अर्थ- इन पासों के बेशक हाथ नहीं हैं, पर ये हाथ वाले जुआरी को हरा देते हैं। ये पासे ठण्डे होने पर भी जुआरियों के हृदय को हारने के डर के कारण जलाते हैं।

11. जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित्।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानोऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति।

(ऋग्वेद 10.34.10)

अर्थ- हारे हुए जुआरी की पत्नी निर्धनता से दुखी होती है और उसकी माता भी परेशान होती है। ऋणी होने पर जुआरी दूसरों के धन पर कुदृष्टि रखता है।

12. अक्षैर्मा दीव्य कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहुमन्यमानः।
तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे विचष्टे सवितायमर्यः।।

(ऋग्वेद 10.34.13)

अर्थ- हे जुआरी! तू जूआ मत खेल, खेती कर, खेती से कमाए हुए धन में सन्तोष करके आनन्दपूर्वक रह, उससे गाय आदि पशु प्राप्त कर तथा अपनी पत्नी आदि परिवार का पालन पोषण कर। परमात्मा का यही आदेश है।

13. हिङ्कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात्।
दुहामश्विभ्यां पयो अघ्नयेयं सा वर्धतां महते सौभगाय।।

(ऋग्वेद 1.164.27)

अर्थ- जैसे पृथिवी महान ऐश्वर्य को बढ़ाती है अर्थात् सब प्रकार की सुख

सामग्री प्रदान करती है वैसे गौएं अत्यन्त सुख देती हैं। इसलिए गौओं को कभी भी मारना न चाहिए।

14. माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाम् अमृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट।।

(ऋग्वेद 8.101.15)

अर्थ- गाय दूध रूपी अमृत से माता की तरह हमारी पालना करती है, पुत्री और बहिन की तरह स्नेह करती है। इसलिए गाय पूज्य है और वध के योग्य नहीं है। जो गाय को मारता है वह पाप और अपराध करता है। गाय की हर प्रकार से रक्षा की जाए।

15. अधः पश्यस्व मोपरि संतरा पादकौ हर।
मा ते कशप्लकौ दृषन्त्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ।। (ऋग्वेद 8.33.19)

अर्थ- हे स्त्री! तू नीचे की ओर देख, ऊपर की ओर तांक-झांक मत कर। अच्छी तरह सम्भल कर अपने पैरों को चला। तेरे स्तन दिखाई न दें। स्त्री मनुष्य समाज को रचने वाली है।

16. स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि।। (ऋग्वेद 5.51.15)

अर्थ- हम सूर्य और चन्द्र की तरह कल्याणकारी मार्ग पर चलते रहें और दानशील, वैर भाव रहित विद्वान मनुष्यों की संगति करते रहें।

17. सम्राज्ञी श्वषुरे भव समाज्ञी श्वश्र्वां भव।
ननान्दरि समाज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु।। (ऋग्वेद 10.85.46)

अर्थ- हे वधू! मेरे पिता जो तेरे ससुर हैं उनसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करके तू रानी की तरह रह। मेरी माता जो तेरी सास है उससे प्रेमपूर्वक वर्तकर तू रानी बन कर रह। अपनी ननदों और देवरों (मेरे छोटे बड़े भाईयों) के साथ भी प्रेमपूर्वक व्यवहार करके तू रानी की तरह रह।

18. न स स्वो दक्षो वरुण धृतिः सा सुरा मन्युर्विभीदको अचित्तिः।
अस्ति ज्यायान्कनीयस उपारे स्वप्नश्च नेदनृतस्य प्रयोता।।

(ऋग्वेद 7.86.6)

अर्थ- मनुष्य केवल अपनी इच्छा से ही पाप कर्म नहीं करता, अपितु कुछ और कारण भी हैं जिनके कारण मनुष्य पाप कर्म कर बैठता है। शराब पीना,

अत्यधिक क्रोध करना, जुआ खेलना, अज्ञान, असावधानी, बड़ों द्वारा छोटों को पाप कर्म करने का आदेश देना, स्वप्न, आलस्य- इनके कारण भी मनुष्य पाप कर्म करता है।

□□□□□

यजुर्वेद

राष्ट्रीय प्रार्थना

19. आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः, सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णु रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। (यजुर्वेद 22.22)

भाषानुवाद

ब्रह्मन्! स्वराष्ट्र में हों द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी।।
होवें दुधारु गौएं, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही।।
बलवान् सभ्य योद्धा यजमान् पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें।।
फल फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हों योग क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी।।

अर्थ- हे सब से महान् प्रभु! आपसे प्रार्थना है कि हमारे देश में सब सत्य विद्याओं के ज्ञाता विद्वान हों जिनके पुरुषार्थ से अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि होती रहे। राष्ट्र के शत्रुओं को मारने में समर्थ शूरवीर क्षत्रिय उत्पन्न हों। दूध, घी, अन्न, सब्जियों और फलों की देश में भरमार हो। बैल, घोड़ा, गाड़ी आदि की सुविधाएं सदा बनी रहें। राष्ट्र की महिलाएं सन्तान के धारण तथा पालन पोषण में समर्थ रहें। जब जब आवश्यकता हो, वर्षा हुआ करे। अतिवृष्टि (वर्षा का बहुत अधिक हो जाना) और अनावृष्टि (वर्षा बिल्कुल न

होना) कभी न हो। देशवासियों का सदा कल्याण हो। सभी आनन्द से रहें। कोई भूखा, प्यासा, नंगा और दरिद्र न रहे। देश से अज्ञान, अन्याय और अभाव का नाश हो।

20. अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यम् उपैमि।। (यजुर्वेद 1.5)

अर्थ- हे ज्ञानस्वरूप, सब व्रतों के पालक प्रभु! मैं यह व्रत करता हूँ कि असत्य आचरण को छोड़कर सत्य का आचरण अपनाऊँ। आपकी कृपा से मेरा यह व्रत पूर्ण हो, सफल हो।

21. ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।। (यजुर्वेद 40.1)

अर्थ- इस गतिशील संसार में जो कुछ भी है वह सब परमेश्वर द्वारा आच्छादित है, अर्थात् परमेश्वर ही उस सब का स्वामी है। इसलिए भोगों को यह जानकर भोग कि ये तुम्हारे नहीं हैं। किसी दूसरे के धन के प्रति लालच मत कर।

22. रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्र यत्र कामयते सुषारथिः।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः।।
(यजुर्वेद 29.43)

अर्थ- रथ पर बैठा हुआ अच्छा चालक आगे दौड़ने वाले घोड़ों को जहां जहां चाहता है, वहां वहां ले जाता है। पीछे लगी रस्सियां घोड़ों को चलाती हैं। ऐसे ही मन इन्द्रियों को चलाता है। मन की वृत्तियों को जानो।

23. ते हि पुत्रासोऽअदितेः प्र जीवसे मर्त्याय।
ज्योतिर्यच्छत्यजस्रम्।। (यजुर्वेद 3.33)

अर्थ- वे ही निश्चित रूप से ईश्वर के पुत्र हैं जो मनुष्य समाज के जीवन के लिए निरन्तर ज्ञान का प्रकाश फैलाते हैं।

24. असुर्य्या नाम ते लोकाऽअन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।। (यजुर्वेद 40.3)

अर्थ- जो लोग अपनी आत्मा का हनन करते हैं, अर्थात् मन में और वाणी में कुछ और तथा कर्म में और कुछ करते हैं। वे राक्षस हैं, अज्ञान अन्धकार में फंसे हैं। मरने के पश्चात् भी वे गहरे अन्धकारमय जीवन को पाते हैं।

25. समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिं।

आस्मिन् हव्या जुहोतन।। (यजुर्वेद 3.1)

अर्थ- लकड़ी में अग्नि लगाकर जलाओ, फिर घी डालकर उसे तेज करो। उस अग्नि में अनेक औषधियां डालकर जलाओ।

26. यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्यमस्तु।

(यजुर्वेद 34.3)

अर्थ- जो मन ज्ञान प्राप्त करने का साधन है, स्मरण करने का और स्मरण रखने का साधन है, सब प्राणियों के अन्दर विद्यमान है, नष्ट न होने वाला है, अन्दर प्रकाश करने वाला है, जिसके बिना कोई भी काम नहीं किया जा सकता, वह मेरा मन शुभ विचारों वाला हो।

27. स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरम् शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।। (यजुर्वेद 40. 8)

अर्थ- वह परमात्मा सर्वत्र व्यापक है। वह शीघ्रकारी है। उसका कोई शरीर नहीं है। वह छिद्र रहित है तथा उसके टुकड़े नहीं हो सकते। वह नस नाड़ी आदि के बंधन से रहित है। अविद्या आदि दोष न होने से वह सदा पवित्र है। वह कभी भी पाप कर्म नहीं करता। वह सर्वज्ञ है। सब जीवों की मनोवृत्तियों को वह जानता है। वह दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला है। वह परमात्मा अनादि स्वरूप वाला है, उसको कोई बनाने वाला नहीं है, उसके माता पिता नहीं है। उसका गर्भवास, जन्म, मृत्यु आदि नहीं होते। वह परमात्मा सदा से प्रजा के लिये वेद के द्वारा सब पदार्थों का अच्छी तरह से उपदेश करता है।

28. भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।। (यजुर्वेद 36-3)

अर्थ- ईश्वर सारे संसार का जीवनाधार है, दुःखों को दूर करने वाला है, आनन्द देने वाला है, समस्त जगत का उत्पादक है, ग्रहण करने योग्य है, शुद्ध स्वरूप है, उत्तम गुणों का प्रदाता है। वह ईश्वर हमारी बुद्धियों को उत्तम कार्यों की ओर प्रेरित करे।

29. यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाऽअग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।। (यजुर्वेद 32-14)

अर्थ- जिस परमबुद्धि को विद्वान् लोग और पहले हुए सज्जन प्राप्त करते व चाहते हैं, हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर! उस परम प्रज्ञा से मुझको मेधावान् करो।

30. अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं विधेम।।

(यजुर्वेद 5-36)

अर्थ- हे सब शुभ कर्मों को जानने वाले ज्ञानस्वरूप परमेश्वर! धन, ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हमें उत्तम मार्ग से ले चल, हमसे कुटिल पाप को दूर कर। आपके लिए हम बहुत ही आदरसूचक वचनों का प्रयोग करें।

31. द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।। (यजुर्वेद 36.17)

अर्थ- प्रकाशक लोक, अप्रकाशक लोक, पृथिवी, जल, औषधियां, वनस्पतियां, समस्त देव शान्ति देने वाले हों। ईश्वर हमें शान्ति दे, सभी पदार्थ शान्तिप्रद हों। शान्ति भी शान्तिदायक हो, वह शान्ति मुझे प्राप्त हो।

32. दृते दृं ह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।। (यजुर्वेद 36.18)

अर्थ- हे सब दुःखों और अज्ञानों के निवारक प्रभु! मुझे दृढ़ कर। मुझे सब प्राणी मित्र की दृष्टि से देखें और मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूँ। हम सब एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें।

33. यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना।। (यजुर्वेद 20.25)

अर्थ- जहां पर आध्यात्मिक ज्ञानी और बल युक्त शूरवीर दोनों साथ-साथ मिलकर चलते हैं और जहां पर व्यवहार कुशल विद्वान् लोग तेज के साथ कार्य करते हैं, उस राष्ट्र को पापरहित सुखी समझता हूँ।

34. वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।। (यजुर्वेद 31.18)

अर्थ- इस ब्रह्माण्ड में व्यापक परमेश्वर को मैं जानता हूँ, जो सबसे बड़ा है, महान ज्ञानी है और अज्ञान से रहित है। उस ईश्वर को जानकर ही मनुष्य मृत्यु से छूटता है। जन्म-मरण के चक्कर से बचने का कोई और मार्ग नहीं है।

35. त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।। (यजुर्वेद 3.60)
अर्थ- हे सारे संसार को सुगन्धी व पुष्टि देने वाले प्रभु! जैसे पक कर खरबूजा बेल से अलग हो जाता है, ऐसे ही मुझे मृत्यु के बंधन से छुड़ाकर अमृत (मोक्ष) का पान कराओ।

36. विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव।। (यजुर्वेद 30-3)
अर्थ- हे सर्व उत्पादक परमेश्वर! समस्त बुराइयों को हम से दूर कीजिए और जो कल्याणकारी उत्तम गुण-कर्म-स्वभाव हैं, उन्हें हमें प्राप्त कराईए।

□□□□□

अथर्ववेद

37. अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्।। (अथर्ववेद 3.30.2)
अर्थ- पुत्र पिता के उत्तम कार्यों को आगे बढ़ाने वाला हो, वह माता के प्रति आदर और प्रेम रखने वाला हो। पत्नी पति के साथ मीठी और शान्ति देने वाली वाणी बोले।

38. मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।। (अथर्ववेद 3.30.3)
अर्थ- भाई भाई से द्वेष न करे, बहिन बहिन से द्वेष न करे। सभी एक विचार वाले और एक लक्ष्य वाले होकर आपस में एक दूसरे के साथ कल्याणकारी वाणी बोलें।

39. युवं भगं सं भरतं समृद्धमृतं वदन्तावृतोद्येषु।
ब्रह्मणस्पते पतिमस्यै रोचय चारु संभलो वदतु वाचमेताम्।।
(अथर्ववेद 14.1.31)
अर्थ- पति पत्नी दोनों एक दूसरे के साथ सत्य का व्यवहार करते हुए खूब धन कमाएं। पत्नी के मन में पति के प्रति रुचि हो और पति पत्नी के साथ सुन्दर और मधुर वाणी बोले।

40. इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दम्पती।

प्रजयेनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुताम्।। (अथर्ववेद 14-2-64)

अर्थ- तुम दोनों पति-पत्नी चकवा-चकवी की तरह प्रेमपूर्वक रहो। तुम्हें संतान प्राप्त हो। सुन्दर घर में रहते हुए तुम गृहस्थाश्रम की सारी आयु का उपभोग करो।

41. अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नौ समञ्जनम्।

अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नौ सहासति।। (अथर्ववेद 7.36.1)

अर्थ- पत्नी (पति से)- हम दोनों आपस में ऐसे प्रेम से रहें कि हम दोनों की आंखों से मिठास टपकती हो, हम दोनों का मुख एक-दूसरे को देखकर खिल उठता हो। हे प्यारे पति! तू मुझे अपने हृदय में स्थान दे, हम दोनों का मन सदा मिला रहे।

42. मम त्वा दोषणिश्रिषं कृणोमि हृदयश्रिषम्।

यथा मम क्रतावसो मम चित्तमुपायसि।। (अथर्ववेद 6.9.2)

अर्थ- पति (पत्नी से)- हे प्यारी पत्नी! मैं तुझे अपनी भुजाओं में लेता हूँ और अपने हृदय में स्थान देता हूँ। तू मेरे कार्यों में सहयोग दे और मेरे मन में स्थान प्राप्त कर।

43. इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्मायुर्व्यश्नुतम्।

क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिः मोदमानौ स्वस्तकौ।। (अथर्ववेद 14.1.22)

अर्थ- हे वर-वधू! तुम दोनों इस गृहस्थ आश्रम में रहो, कभी अलग मत होवो। पुत्रों और नातियों के साथ खेलते हुए, प्रसन्नता पूर्वक अपने घर में रहते हुए अपनी सारी आयु को अच्छे प्रकार से भोगो।

44. अन्ति सन्तं न जहाति अन्ति सन्तं न पश्यति।

देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।। (अथर्ववेद 10-8-32)

अर्थ- ईश्वर हम सबके अन्दर विद्यमान है। कोई भी प्राणी उससे कभी भी अलग नहीं हो सकता और न ही उसे आँखों से देख सकता है। ऐ मनुष्य! उसे जानने के लिए तू वेदों में दिए उसके ज्ञान को प्राप्त कर जो न कभी मरता है और न ही कभी पुराना होता है।

45. यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति यो निलायं चरति यः प्रतंकम्।

द्वौ संनिषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद्वेद वरुणस्तृतीयः।। (अथर्ववेद 4.16.2)

अर्थ- चाहे कोई मनुष्य ठहरा हुआ है या चल रहा है, चाहे कोई किसी को ठग

रहा है, चाहे कोई किसी के पीछे छिप कर षडयन्त्र रच रहा है, बेशक कोई दो मनुष्य कहीं एकान्त में किसी विषय पर गुप्त चर्चा कर रहे हैं, सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी परमेश्वर तीसरा वहां उपस्थित रहता हुआ सब कुछ जान लेता है।

46. न किल्बिषमत्र नाधारो अस्ति न यन्मित्रैः सममान एति।
अनूनं पात्रं निहितं न एतत् पक्तारं पक्वः पुनराविशाति।।

(अथर्ववेद 12.3.48)

अर्थ- अच्छे, बुरे कर्म के फल में किसी भी क्रियाकाण्ड से कोई कमी नहीं आती, न किसी की सिफारिश चलती है और न ही कोई मित्र, साथी या सम्बन्धी कर्मफल का हिस्सा ले सकता है। जिसका कर्म है उसका फल उसे ही मिलता है और जितना है उतना ही मिलता है, कम या अधिक नहीं।

47. त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी।
त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि त्वं जातो भवसि विश्वतोमुखः।।

(अथर्ववेद 10.8.27)

अर्थ- हे जीव! कभी तू स्त्री के शरीर में जाकर स्त्री कहलाता है, कभी पुरुष, कभी लड़के और कभी लड़की के शरीर में जाकर पुरुष, लड़का और लड़की कहलाता है। कभी तू बूढ़े शरीर में लाठी के सहारे चलता है। इस प्रकार तू अनेक शरीर धारण करता है।

48. उतैषां पितोत वा पुत्र एषामुतैषां ज्येष्ठ उत वा कनिष्ठः।
एको ह देवो मनसि प्रविष्टः प्रथमो जातः स उ गर्भे अन्तः।।

(अथर्ववेद 10.8.28)

अर्थ- जीवात्मा कभी तो बालकों का पिता बनता है और कभी वह इनका पुत्र बन जाता है। वह भाईयों में कभी बड़ा भाई बन जाता है और कभी छोटा भाई बन जाता है। एक एक जीव एक एक मन में रहता है। यह जीव अलग-अलग गर्भों में आता रहता है।

49. सा नो भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः। (अथर्ववेद 12.1.10)

अर्थ- जिस प्रकार माता अपनी सन्तान को दूध पिलाती है उसी प्रकार यह पृथ्वी हम सबको खाने-पीने की वस्तुएं प्रदान करती है।

50. माता भूमिः पुत्रो अंह पृथिव्याः।
पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु।। (अथर्ववेद 12.1.12)

अर्थ- भूमि मेरी माता है, मैं इसका पुत्र हूँ। बादल पिता है, वह हम सबका पालन करे।

51. यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नो ऽसो अवीरहा।। (अथर्ववेद 1.16.4)

अर्थ- यदि तू हमारी गाय को मारे या हमारे घोड़े को मारे या मनुष्य को मारे तो हम तुझे सीसे (सिक्का) की गोली से मारेंगे। फिर तू इनमें से किसी को भी मार न सकेगा।

52. व्रीहिमत्तं यवमत्तमथो माषमथो तिलम्।
एष वां भागो निहितो रत्नधेयाय दन्तौ मा हिंसिष्ट पितरं मातरं च।।

(अथर्ववेद 6.140.2)

अर्थ- हे मनुष्यो! चावल खाओ, जौ खाओ, उड़द खाओ, तिल खाओ। ये अनाज तुम्हारे लिए ही बनाए गए हैं। उन्हें मत मारो जो माता पिता बनते हैं अर्थात् पशु पक्षियों को मत मारो।

53. परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वां कामये वृक्षां वनानि संचर गृहेषु गोषु मे मनः।।

(अथर्ववेद 6.45.1)

अर्थ- ऐ मेरे मन के बुरे विचार! तू दूर हट जा। बुरे कार्यों को तू अच्छा क्यों समझता है, मैं तुझे नहीं चाहता, तू दूर पेड़ों में जंगलों में चला जा। मेरा मन तो घर में और गायों में लगा हुआ है।

54. परोऽपेह्यसमृद्धे वि ते हेतिं न्यामसि।
वेद त्वाहं निमीवन्तीं नितुदन्तीमराते।। (अथर्ववेद 5.7.7)

अर्थ- ओ दरिद्रता! तू दूर चली जा। हम तेरे ऊपर वज्र से प्रहार करते हैं। हम जानते हैं कि तू सब प्रकार से निर्बल करने वाली है और अनेक प्रकार से पीड़ा देने वाली है।

55. यथा वातश्च्यावयति भूम्या रेणुमन्तरिक्षाच्चाभ्रम्।
एवा मत्सर्वं दुर्भूतं ब्रह्मनुत्तमपायति।। (अथर्ववेद 10.1.13)

अर्थ - जैसे वायु भूमि से धूल और आकाश से बादलों को उड़ा देती है वैसे ही ज्ञान द्वारा मेरे सब दुष्ट भाव दूर हो जाएँ।

□□□□□

उपनिषदों के कुछ महत्त्वपूर्ण उपदेश

अनुपश्य यथा पूर्वे प्रतिपश्य तथा अपरे।
सस्यमिव मर्त्यः पच्यते सस्यमिव आजायते पुनः।। (कठोपनिषद)

अर्थ- जो तुझसे पहले हो चुके हैं उन्हें देख, जो तेरे बाद में होंगे उनकी बाबत विचार कर। यह मरणशील मनुष्य अन्न की तरह पैदा होता है, पकता है, नष्ट हो जाता है और फिर उत्पन्न हो जाता है।

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद् वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदम् संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्।।

(कठोपनिषद)

अर्थ- जिस पद (शब्द) का सब वेद बार-बार वर्णन करते हैं, जिसे जानने के लिए सब तप किए जाते हैं, जिसकी चाहना में यति लोग ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, वह पद संक्षेप में तुझे बताता हूँ, वह पद 'ओम्' है।

न जायते म्रियते वा विपश्चित् नायं कुतश्चित् न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाष्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।। (कठोपनिषद)

अर्थ- जीवात्मा न उत्पन्न होता है, न मरता है, न यह कभी किसी कारण से उत्पन्न हुआ है। यह अजन्मा है, नित्य है, सदा रहने वाला है, पुरातन है। शरीर के मरने पर भी यह मरता नहीं।

एष सर्वेषु भूतेषु गूढ़ात्मा न प्रकाशते।
दृश्यते तु अग्रयया बुद्धया सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः।। (कठोपनिषद)

अर्थ- परमात्मा सारी जड़ चेतन सृष्टि में छिपा हुआ है, वह सामने नहीं है। सूक्ष्म दृष्टि वाले लोग अपनी तीव्र और सूक्ष्म बुद्धि से उसे देखते हैं, जानते हैं।

असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽअमृतं गमय।

(बृहदारण्यक उपनिषद, प्रथम अध्याय-तीसरा ब्राह्मण)

अर्थ- हे ईश्वर! आप मुझे गलत रास्ते से हटाकर ठीक मार्ग पर ले चलिए। अविद्या अन्धकार से छुड़ाकर विद्या रूप प्रकाश को प्राप्त कराईए। मृत्यु रोग से बचाकर मोक्ष रूप अमृत को दीजिए।

न संदृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चन एनं।

हृदा हृदिस्थं मनसा य एनं एवं विदुः अमृताः ते भवन्ति।। (श्वेताश्वतर)
अर्थ- परमात्मा का कोई रूप (आकृति, वर्ण, स्वरूप) नहीं जिसे आंखों से देखा जा सके। इसलिए उसे कोई भी आखों से नहीं देखता। वह हृदय में स्थित है। जो उसे हृदय से तथा मन से जान लेते हैं वे आनन्द को प्राप्त करते हैं।

नैव स्त्री न पुमान् एष न च एव नपुंसकः।
यद् यद् शरीरम् आदत्ते तेन तेन स रक्ष्यते।। (श्वेताश्वतर)
अर्थ- जीवात्मा न स्त्रीलिंगी है, न पुल्लिंगी है और न ही नपुंसक-लिंगी है। ये लिंग शरीर के हैं। जिस जिस शरीर को यह पाता है उस उस के लिंग का कहा जाता है। उदाहरण- पानी का अपना कोई रंग नहीं है, पानी में जो रंग डाला जाता है, पानी उस रंग का कहा जाता है।

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।। (श्वेताश्वतर)
अर्थ- ईश्वर की आभा के सामने सूर्य का प्रकाश फीका पड़ जाता है, चन्द्र और तारे प्रकाशहीन हो जाते हैं, आसमानी बिजलियां भी उसके सामने फीकी हैं, फिर इस आग की तो औकात ही क्या है। उसी के प्रकाश से ये सब प्रकाशित हैं।

केनोपनिषद्

मनुष्य में देखने, बोलने और सुनने की शक्ति ईश्वर ने ही दी है। ईश्वर की दी हुई शक्ति से मन विचारने लगता है। जन्म के समय जब प्राण पहली बार चलने लगते हैं वह ईश्वर की प्रेरणा से ही होता है।

ईश्वर का आदेश- उसका बखान तो ऐसे है जैसे आसमानी बिजली चमकती है और छिप जाती है। इस चमकने के थोड़े समय में आप कुछ देख लें। ऐसे ही ईश्वर विशेष परिस्थितियों में कुछ क्षण के लिए मन में एक विचार देता है। कोई कोई उसे पकड़ लेता है। यह ऐसे ही है जैसे आँख खुले और झपकी मारे और इस बीच कुछ देख जाए।

यह मन हर क्षण या तो बीते हुए को याद करता है या आगे के लिए नए विचार करता है।

कठोपनिषद्

श्रेय (कल्याणकारी) तथा प्रेय (प्रिय लगने वाला)-ये दोनों भावनाएं

मनुष्य के सामने आती हैं। धीर पुरुष इन दोनों की भली प्रकार मन से सोचकर परीक्षा करता है, छान-बीन करता है। वह प्रेय की अपेक्षा श्रेय को ही चुनता है। धीर पुरुष वह है जो कोई काम जल्दी में नहीं करता, तत्काल फल नहीं देखता। मन्द-बुद्धि व्यक्ति सुख चैन के लिए, आराम से जीवन बिताने के लिए प्रेय को चुनता है।

जो व्यक्ति दुराचारी है, अशान्त है, चञ्चल चित्त वाला है, जिसकी विचार शक्ति स्थिर नहीं है, वह परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकता। परमात्मा को शुद्ध ज्ञान के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

शरीर एक रथ है, आत्मा रथी अर्थात रथ का मालिक है, बुद्धि सारथी है, मन लगाम है। इन्द्रियां घोड़े हैं, इन्द्रियों के विषय वे मार्ग हैं जिन पर इन्द्रियां रूपी घोड़े दौड़ते हैं।

आँख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा को पसन्द है, केवल इस कारण से ही कार्य नहीं किया जाना चाहिए। अपितु बुद्धि से विचार कर ही कार्य किया जाना चाहिए।

सारे ब्रह्माण्ड में एक ही शक्ति काम कर रही है- वह है ब्रह्म की शक्ति। जो व्यक्ति यह समझता है कि यहां कोई और शक्ति है और वहां कोई और, वह अज्ञान-अंधकार में है।

मनुष्य का जैसा ज्ञान और कर्म होता है उसके अनुसार ही उसे अगली योनि मिलती है।

यह संसार स्वतन्त्र नहीं है, किसी के वश में है। संसार को वश में करने वाला वही एक परमेश्वर है। सब प्राणियों के आत्मा में उसका वास है। आत्मा में बैठे उस ब्रह्म को जो धीर पुरुष देख लेते हैं वे पाप कर्म नहीं करते और सुखी रहते हैं।

ईश्वर कुछ कुछ तो सभी को भासता है। हां कभी-कभी उसका विशेष भास होने लगता है।

आँख उसे देख नहीं सकती। हाथ उसे पकड़ नहीं सकते। मन को वश में रखने वाले ज्ञानी लोग आँख से और हाथ से नहीं हृदय से और मन से उसे पकड़ पाते हैं।

जब पाँच ज्ञान इन्द्रियां मन के साथ स्थिर हो जाती हैं, भागती नहीं

फिरतीं, और मन निश्चल बुद्धि के साथ आ मिलता है, उस अवस्था को परम गति (श्रेष्ठ स्थिति) कहते हैं।

इन्द्रियों की स्थिर धारणा को योग कहते हैं। जिसकी इन्द्रियां स्थिर हो जाती है वह प्रमादरहित और सावधान हो जाता है। तब शुभ संस्कारों की उत्पत्ति होती है और अशुभ संस्कारों का नाश होता है।

प्रश्नोपनिषद्

मन या तो संकल्प-विकल्प में उलझा रहता है या इन में से निकल कर सत्य निश्चय पर पहुँच जाता है।

जैसे शहद की मक्खियों की रानी मक्खी के उड़ जाने पर सब मक्खियां उड़ जाती हैं और उसके बैठने पर सब बैठ जाती हैं। इसी प्रकार प्राण के निकलने पर सब इन्द्रियां निष्क्रिय हो जाती हैं। वे तब तक ही सक्रिय हैं जब तक शरीर में प्राण हैं।

कौन सोता है- मन सोता है और मन इन्द्रियों का मुखिया है। इसलिए जब मन सोता है सब इन्द्रियां- पाँच ज्ञान इन्द्रियां और पाँच कर्म इन्द्रियां अपने मुखिया में एक हो जाती हैं। इसी कारण से सोते समय मनुष्य न सुनता है, न देखता है, न सूंघता है, न चखता है, न छूता है, न बोलता है, न पकड़ता है, न चलता है, न ही मल-मूत्र त्यागता है। ऐसी अवस्था में हम कहते हैं कि वह सो रहा है।

कौन जागता है- मनुष्य के सोते समय भी पाँचों प्राण नहीं सोते। ये प्राण हैं- प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान।

क. आँख, कान, नाक, मुख में प्राण काम करता है।

ख. शरीर के मध्य भाग में समान काम करता है।

ग. मल-मूत्र के स्थान पर अपान वायु काम करती है।

घ. हृदय से लेकर सम्पूर्ण रक्त-संचारिणी संस्थान (Circulatory System) में व्यान विचरता है।

च. हृदय से एक नाड़ी मस्तिष्क को जाती है उसमें उदान वायु रहती है।

कौन स्वप्न देखता है- मन ही स्वप्न देखता है। जो जागते समय देखा है उसे सोते समय भी ऐसे देखता है जैसे प्रत्यक्ष देख रहा हो। जो जागते समय सुना है, उसे सोते समय भी ऐसे सुनता है जैसे जागते हुए ही सुन रहा हो।

देश देशान्तर में जो अनुभव किया है उसे बार-बार स्वप्न में अनुभव करता है। देखे हुए को और कई बार पहले न देखे हुए को, सुने हुए को और कभी-कभी पहले न सुने हुए को, पहले अनुभव किए पदार्थ को और कभी-कभी पहले अनुभव में न आए पदार्थ को भी, सच्ची और झूठी, विद्यमान और अविद्यमान, होने वाली और न होने वाली सम्भव और असम्भव (सत् असत्)-मन वह सब देखता है।

मनुष्य ही नहीं सभी प्राणी स्वप्न देखते हैं।

निद्रा की अवस्था में मन- सत्त्व, रज, तम- इन तीनों में से किसी एक गुण से प्रभावित होता है, कोई एक अवस्था प्रबल होती है।

जब सत्त्वगुण प्रधान होता है तब वह स्वप्न नहीं देखता, गूढ निद्रा में होता है। उस समय आत्मा को सुख हो रहा होता है। जागने पर तरोताजा होता है और कहता है- सुख से सोया।

अगर निद्रा में रजोगुण प्रधान हो तो सोकर उठने पर मनुष्य दुःखी अनुभव करता है, हृदय धड़कता है, बेचैनी होती है।

अगर निद्रा में तमोगुण प्रधान हो तो उठने पर शरीर भारी होता है, चित्त में ग्लानि होती है। सोने पर भी ऐसा लगता है कि मानो एक पल भी नहीं सोया। ये अवस्थाएं आत्मा की नहीं, शरीर की होती हैं। सुख-दुःख आत्मा को होता है।

जैसे सांप केञ्चुली को छोड़ देता है, वैसे ही ईश्वर का उपासक पाप कर्म को छोड़ देता है।

मुण्डकोपनिषद्

जैसे मकड़ी अपने शरीर के अन्दर से जाले बनाती है और फिर उसे समेट लेती है, जैसे पृथ्वी में औषधियां उत्पन्न होती हैं, जैसे जीवित पुरुष के शरीर से बाल निकलते हैं, इसी प्रकार ब्रह्म के प्रकृति रूपी शरीर से संसार बन जाता है।

प्रणव (ओम्) धनुष है, आत्मा बाण है, ब्रह्म (ईश्वर) लक्ष्य है।

(ईश्वर तुम्हारे अन्दर है, तुम्हारी आत्मा में है, तुम्हारे मन में है। वह सब देख रहा है जो तुम सोच रहे हो और जो तुम कर रहे हो। वह ईश्वर ही सभी कर्मों का यथोचित फल देने वाला है।)

सत्यमेव जयते नानृतं, सत्येन पन्था विततो देवयानः।

अर्थ- सत्य की ही जीत होती है, झूठ की नहीं। सत्य के मार्ग पर चलकर ही मनुष्य देवता बनता है।

माण्डूक्योपनिषद्

(जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति- ये तीन अवस्थाएं शरीर की हैं, जीवात्मा की नहीं। जीवात्मा की तो सदा एक ही अवस्था रहती है।)

जाग्रत अवस्था में जीवात्मा स्थूल शरीर से और स्थूल इन्द्रियों से भोग करता है। स्वप्न अवस्था में सूक्ष्म शरीर से और सूक्ष्म इन्द्रियों से भोग करता है। यह भोग स्थूल जगत् का नहीं अपितु विचारमय जगत् का होता है।

सुषुप्त अवस्था में शरीर और आत्मा का सम्बन्ध एक प्रकार से टूट जाता है। जीवात्मा अपनी शक्ति को बाहर बखेरने की बजाए अपने अन्दर खींच लेता है, शरीर से मानो अपने आपको अलग सा कर लेता है। तब जीवात्मा तो ज्ञान की अवस्था में पहुँच जाता है और शरीर अत्यन्त अज्ञान की अवस्था में। ऐसी अवस्था में जीवात्मा आनदमय हो जाता है, आनन्द का उपभोग करता है। शरीर की सुषुप्त अवस्था में जीवात्मा को जो आनन्द प्राप्त होता है, उसी को जागने पर मनुष्य याद करता है।

तैत्तिरीय उपनिषद्

मेरी कीर्ति इतनी फैले, जितनी फैली हुई पहाड़ की पीठ होती है। पर्वत की चोटी पर जैसे पवित्र हिम होती है उसी प्रकार पवित्रता को लेकर मैं ऊँचा उठूँ। मेरे उठने में अपवित्रता नहीं, हिम की सी पवित्रता सहायक हो।

ब्रह्म को देखने के लिए कहीं दूर जाने की जरूरत नहीं। यह संसार जो दिखता है यह ब्रह्म का ही प्रत्यक्ष रूप है।

गलती हो जाने पर जिस किसी की आँखें इन दो बातों की तरफखुल जाती हैं- मैंने ठीक नहीं किया या मैंने पाप किया है- इन दो बातों पर जो विचार करने लगता है, उसका आत्मा बलवान हो जाता है। ये दोनों विचार आत्मा को बलवान बना देते हैं।

दीक्षान्त भाषण- वेद विद्या पढ़ चुकने के बाद आचार्य अपने शिष्य को उपदेश देता है- सत्य बोलना, धर्माचरण करना, गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करके प्रजा के सूत्र को मत तोड़ना, सत्य बोलने में प्रमाद मत करना, धर्माचरण में

प्रमाद न करना, जिस बात से तुम्हारा भला हो, उस बात में प्रमाद न करना, अपने ऐश्वर्य प्राप्ति में प्रमाद मत करना, स्वाध्याय और प्रवचन में प्रमाद मत करना।

जो देव हैं- तुमसे गुणों में बड़े हैं और जो पितर हैं- तुमसे आयु में बड़े हैं, उनके प्रति अपने कर्तव्य पालन में प्रमाद मत करना, माता को देवी समझना, पिता-आचार्य-अतिथि को देवता मानना। हमारे जो अनिन्दित (ठीक) कर्म हैं उन्हें ही अपनाना, दूसरों को नहीं। हमारे जो अच्छे आचरण हैं उन्हीं पर तुम आचरण करना, दूसरों पर नहीं।

दान देते रहना- श्रद्धा हो तो देना, श्रद्धा न हो तो भी देना। अपने पास धन है, इस कारण से भी देना, लोक लाज के लिए भी देना। शुभ कर्म न होंगे तो सुख न मिलेगा- इस कारण से भी देना। किसी से प्रेम हो- इस कारण से भी देना।

अगर किसी काम में सन्देह हो जाए, यह समझ न पड़े कि धर्माचार क्या है तो जो वहां ज्ञानी, विचारशील, धर्म बुद्धि वाले लोग हैं, ऐसी स्थिति में जैसे वे वर्तते हैं, वैसे तुम वर्तो।

ऐतरेयोपनिषद्

गर्भ कहने को तो स्त्री धारण करती है, परन्तु वास्तव में शुरु से ही यह पुरुष धारण करता है। वीर्य से ही तो गर्भ होता है। यह वीर्य पुरुष के अंग अंग के तेज का ही तो सार-तत्त्व है। इस प्रकार पुरुष पहले वीर्य रक्षा द्वारा अपने में अपने को धारण करता है। उसे जब स्त्री में सिंचित् करता है तब मानो वह अपने को ही सिंचित् करता है। यह वीर्य स्त्री में जाकर उसका आत्मवत् हो जाता है, ठीक ऐसे जैसे कि वह उसका अपना ही अंग हो, विजातीय पदार्थ होते हुए भी वह स्त्री को कष्ट नहीं देता। स्त्री उसे अपने अन्दर सुरक्षित रखकर उसकी पालना करती है। क्योंकि वह मानो हमारी ही पालना करती है, इसलिए स्त्री की पालना करना हमारा कर्त्तव्य है।

छान्दोग्य उपनिषद्

संसार को ऐसे भोगो कि लोग तुम्हारी प्रशंसा करें, निन्दा नहीं। भोग के साथ त्याग हो तो तेज भी आ जाता है। शक्ति भय की न हो, प्रेम की हो।

घोर अंगिरस ऋषि ने देवकी पुत्र कृष्ण से कहा कि जीवन का

अन्तकाल आने पर उपासक इन तीन वाक्यों का उच्चारण करे-

अक्षितम् असि- हे भगवान! आप अविनाशी हैं।

अच्युतम् असि- हे भगवान! आप सदा एक रस हैं।

प्राणसंशितम् असि- हे भगवान! आप प्राण से भी अधिक तीक्ष्ण (तीखा) हैं, सूक्ष्म हैं।

ब्रह्म ज्ञान पाने के बाद मनुष्य पाप-कर्म में लिप्त नहीं होता जैसे कमल-पत्र पानी में रहते हुए भी उसमें लिप्त नहीं होता।

ब्रह्म ज्ञान का अर्थ है ईश्वर सत्ता को समझना, उसके गुण-कर्म-स्वभाव को जान लेना। यह जानना कि ब्रह्म संसार में चप्पे-चप्पे में मौजूद है। वह हमारे सब कर्मों को देखता है तथा न्यायपूर्वक उनका फल देता है।

मन में विचार कर ही वाणी से बोलना चाहिए। बिना विचारे बोलना ऐसे है जैसे एक पहिए की गाड़ी पर चलना।

प्राण, वाणी, चक्षु, श्रोत्र, मन- इन सबमें कौन श्रेष्ठ? प्राण इन सबमें श्रेष्ठ है क्योंकि प्राण के निकलने पर ये सब निकल जाते हैं, शरीर में कोई भी ठहर नहीं सकता।

प्राण शरीर से निकलने लगा तो इन्द्रियां इस प्रकार उखड़ गईं जैसे खूँटे से बन्धा हुआ उत्तम घोड़ा दौड़ने लगे और खूँटे को उखाड़ दे।

मनुष्य जो भोजन करे, वह केवल अपने शरीर के लिए ही हितकारी न हो, बल्कि सारे संसार के लिए कल्याणकारी हो। हर ग्रास के साथ ऐसी भावना हो।

मन अन्न से बनता है, प्राण जल से बनता है और वाणी तेज (घी) से बनती है। जैसे दही मथने पर उसका सूक्ष्म अंश मक्खन ऊपर उठ जाता है, ऐसे ही अन्न का सूक्ष्म अंश मन, जल का सूक्ष्म अंश प्राण तथा घी का सूक्ष्म अंश वाणी बन जाता है।

जैसे डोर से बन्धा पक्षी विभिन्न दिशाओं में उड़ उड़ कर जाता है, पर कहीं ठिकाना न पाकर जहां बन्धा है वहीं आकर आश्रय पता है। इसी प्रकार मन दिशा-दिशा में जाता है, परन्तु कहीं ठिकाना न पाकर प्राण का ही आकर सहारा लेता है। प्राण ही मन को बान्धने वाला खूंटा है। (इसी कारण से प्राणायाम के द्वारा प्राण वश में करके मन वश में आ जाता है।)

वट वृक्ष के फल के अन्दर जो छोटे-छोटे दाने हैं, उनमें से प्रत्येक के अन्दर जो है वही सूक्ष्म पदार्थ इतने बड़े वृक्ष को खड़ा कर देता है। ऐसे ही इतना बड़ा मनुष्य शरीर एक सूक्ष्म पदार्थ से ही बना है।

जैसे पानी में घुला हुआ नमक चखने पर स्वाद देता है, पर आँख से दिखाई नहीं देता और नमक पानी के हर भाग में है - ऊपर, मध्य, नीचे। इसी प्रकार ईश्वर इस सृष्टि में सब जगह है।

जब मरणासन्न मनुष्य को उसके बन्धु-बान्धव चारों तरफसे घेर लेते हैं और पूछते हैं - मुझे पहचानते हो? जब तक उसकी वाणी मन में, मन प्राण में, प्राण तेज में और तेज आत्मा में लीन नहीं हो जाता वह पहचानता जाता है।

मृत्यु के समय पहले वाणी बन्द होती है, परन्तु मन में वह विचार करता रहता है। मन भी जब काम करना बन्द कर देता है तब भी प्राण चलता रहता है। जब प्राण भी चलता प्रतीत नहीं होता और शरीर में तेज (गर्मी) रहता है तब तक हम उसे मरा नहीं समझते। जब तेज भी चला जाता है तब हम कहते हैं कि वह मर गया है।

वेद आदि ग्रन्थ पढ़कर मनुष्य मन्त्रवित् तो बन जाता है, आत्मवित् नहीं, शब्द-ज्ञान तो आ जाता है, परन्तु आत्म-ज्ञान नहीं आता। आत्मवित् बनने के लिए शब्द-ज्ञान तो सीढ़ी का पहला पाया है।

सत्य वही बोलता है जिसे ज्ञान होता है। ज्ञान-विज्ञान उसे ही प्राप्त होता है जो मनन करता है। जो मनन नहीं करता वह समझता भी कुछ नहीं।

जैसे अपनी मेहनत से कमाया हुआ धन-सम्पत्ति भोग लेने के बाद समाप्त हो जाता है, वैसे ही दानादि पुण्य कर्मों से कमाया हुआ पुण्य भोग लेने के बाद समाप्त हो जाता है।

यह आत्मा हृदय में है। हृदय को हृदय कहते भी इसलिए हैं क्योंकि 'हृदि-अयम्' यह हृदय में है। जो इस रहस्य को दिन प्रतिदिन जानता है वह उसे बाहर ढूँढ़ने की बजाए हृदय के अन्दर ढूँढता है और वही सुख को पाता है।

शरीर में हृदय मानो सूर्य है। उससे पिंगला (हलका पीला), सफेद, नीला, पीला, लाल रंग की नाड़ियां सूक्ष्म रस से भरी हुई सूर्य की किरणों की तरह चारों तरफ फैल रही हैं। जब मनुष्य मरता है तब आत्मा इन्हीं हृदय की किरणों रूपी नाड़ियों में से किसी एक में से होकर निकल जाती है। ये नाड़ियां

आँख, कान, नाक आदि सभी इन्द्रियों को गई हैं।

यह शरीर मरणधर्मा है और अमृत-रूप आत्मा का निवास स्थान है। आत्मा स्वभाव से बिना शरीर के है। परन्तु जब तक शरीर के साथ अपने को एक समझ कर रहता है, तब तक उसे सुख-दुःख लगा रहता है। आत्मा के अपने अशरीर रूप में आने पर उसे सुख-दुःख नहीं होता।

वायु, बादल, विद्युत्, गर्जना- ये भी बिना शरीर के हैं और आकाश में रहते हैं। पर जब इनका सूर्य से सम्पर्क होता है, तब प्रकट होते हैं। सूर्य की गर्मी से ही वायु चलने लगती है, बादल प्रकट होते हैं, आकाश में बिजली चमकती है, गर्जना होती है।

जैसे रथ से घोड़े जुते हैं ऐसे ही शरीर से प्राण और आत्मा जुड़े हैं।

आँख देखने का साधन है, जो देख रहा है वह आत्मा है। नाक सूंघने का साधन है, जो सूंघ रहा है वह आत्मा है। वाणी व्यवहार करने का साधन है, जो व्यवहार कर रहा है वह आत्मा है। कान सुनने के लिए है, परन्तु जो सुनता है वह आत्मा है। मन मनन करने का साधन है, उससे भूत-भविष्य, आगे-पीछे सब देखता है, कल्पना करता है, पर करने वाला आत्मा है।

सुषुप्त अवस्था में आत्मा को जो आनन्द होता है वह उसे अपने शुद्ध स्वरूप में जाने के कारण होता है। सुषुप्त अवस्था में आत्मा नहीं सोता, शरीर सोता है। आत्मा जड़वत् नहीं होता, शरीर जड़वत् होता है।

जैसे घोड़ा बालों को झाड़कर गर्दन झाड़ देता है उसी प्रकार आत्मा के यथार्थ रूप को जानकर मैं पापों को झाड़ दूँ।

बृहदारण्यक उपनिषद्

अगर ब्रह्म का कोई शरीर है तो यह सब ब्रह्माण्ड ही उसका शरीर है।

प्राण अंगों का रस है। जिस-जिस अंग से प्राण निकल जाता है वह वह अंग सूख जाता है।

पाप को-दुर्विचार को संकल्प में आने से पहले ही समाप्त कर देना चाहिए।

याज्ञवल्क्य ऋषि का कथन है कि हमारा शरीर चने के आधे दल के समान है। जैसे चने का आधा दल दूसरे आधे दल के साथ मिलकर पूरा होता है, वैसे ही पुरुष के सामने का खाली आकाश स्त्री के साथ मिलने से ही पूरा

होता है।

यह आत्म-तत्त्व पुत्र से अधिक प्यारा है, वित्त से अधिक प्यारा है। यह अन्य सब वस्तुओं से अधिक प्यारा है।

धर्म क्या है? सत्य ही धर्म है, धर्म ही सत्य है। तभी तो सत्य बोलने वाले के लिए कहा जाता है कि धर्म कहता है और धर्म बोलने वाले के लिए कहा जाता है कि यह सत्य कहता है।

धर्म के सम्बन्ध में केवल दो बातें जानने की हैं- एक ईश्वर, दूसरा सत्य। इन दो को समझ लिया तो सब समझ लिया।

जिस अन्न को हम सब खाते हैं वह अन्न सब का सांझा है। उसे जो अपने ही लिए रख लेता है वह पाप से नहीं छूटता। अन्न को तो सबके साथ बांट कर खाना ही ठीक है।

मन ठीक रहे तो शरीर की सब इन्द्रियां ठीक रहती हैं। मन बिगड़ा तो सब बिगड़ा। पितर (माता-पिता आदि वृद्धजन) मनुष्य समाज के मन की तरह रक्षक हैं। प्राण शरीर का सब काम चलाता है। साधारण लोग भी समाज का सब काम काज करते हैं, वे प्राण की तरह हैं।

जैसे चन्द्र रात्रियों से पूर्ण होता है, रात्रियों से क्षीण होता है, वैसे पुरुष कभी वित्त (धन) में पूर्ण हो जाता है, कभी खाली हो जाता है। आत्मा इस शरीर रूपी पहिए की नाभि है, यह अविचल है। वित्त इस पहिए के अरे के समान है, ऊपर नीचे होता रहता है।

साधारण लोग जो खाने, पीने और सन्तानोत्पत्ति में लगे हैं मनुष्य कहलाते हैं, अपना ही विचार छोड़ संसार की रक्षा में जो लगे हैं वे पितर कहलाते हैं, संसार को ज्ञान देकर आगे बढ़ाने वाले लोग देव कहलाते हैं।

जब तक पुत्र (सन्तान) नहीं होता तब तक मनुष्य स्वभाव का व्यक्ति इस संसार-युद्ध में अपने आपको हारा हुआ समझता है।

पितर लोग निरन्तर कर्म में लगे रहते हैं तब जाकर दुनिया का भला होता है। देव लोग विद्या दान द्वारा, ज्ञान के प्रचार द्वारा संसार का भला करने में लगे रहते हैं। सबसे श्रेष्ठ देव लोक है।

आँख, कान, वाणी आदि सभी इन्द्रियां काम करते करते थक जाती हैं। परन्तु प्राण नहीं थकता, लगातार चलता रहता है। इसलिए भी प्राण सबमें

श्रेष्ठ है।

ऋषि याज्ञवल्क्य पत्नी मैत्रेयी को उपदेश देते हैं- पति की कामना के लिए पति प्रिय नहीं होता, अपनी आत्मा की कामना के लिए पति प्रिय होता है। पत्नी की कामना के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती, अपनी आत्मा की कामना के लिए पत्नी प्रिय होती है। पुत्र की कामना के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता, अपनी आत्मा की कामना के लिए पुत्र प्रिय होता है।

जैसे कपड़े में ताना-बाना होता है तभी कपड़ा रह सकता है। जैसे धागे में मनके पिरोए रहते हैं तभी माला रह सकती है। वैसे ही यह लोक लोकान्तर ब्रह्मलोक में हैं।

ब्रह्म ही है जो अन्तर्यामी है, जो इस लोक-परलोक और सब चर-अचर भूतों का भीतर से नियमन कर रहा है।

प्राण-वायु रूपी धागे से ही तो जीवित मनुष्य के अंग मनके की तरह गुंथे रहते हैं।

न तदश्नाति किंचन न तदश्नाति कश्चन।

अर्थ- वह (ब्रह्म) कुछ नहीं खाता और कोई उसको नहीं खाता।
जैसे शरीर में आत्मा है ऐसे ही ब्रह्माण्ड में परमात्मा है।

जैसे लदी हुई गाड़ी ठिकाने पहुँचकर अपना बोझ उतार देती है, इसी प्रकार जीवन रूपी यात्रा के अन्त में आत्मा से लदी हुई शरीर रूपी गाड़ी अपनी सवारी आत्मा को उतार देती है।

जैसे आम, गूलर या पीपल का फल पक कर अपनी टहनी से टपक पड़ता है, वैसे ही जब यह शरीर बुढ़ापे से या बिमारी से निर्बल हो जाता है, तब यह आत्मा शरीर के भिन्न भिन्न अंगों से छूट जाता है।

जैसे इस जीवन में जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्थाएं हैं, ऐसे ही जन्म और मृत्यु हैं। आत्मा इन सब स्थितियों में चक्कर काटता रहता है।

जब शरीर दुर्बल हो जाता है, मन बेखबरी की हालत में आ जाता है, तब सब इन्द्रियाँ इकट्ठी होकर आत्मा के पास पहुँचती हैं। वह इन में से तेज की मात्रा को, जिसके कारण ये काम करती हैं, खींच लेता है, और उस तेज को, जो वास्तव में इसी का था, अपने साथ लेकर हृदय प्रदेश में उतर आता है।

उस समय वह हृदय के अग्र प्रदेश में, जहां से हिता नाम की नाड़ियां

ऊपर को जाती हैं, आ जाता है। हृदय का अग्र प्रदेश आत्मा की ज्योति से प्रकाशित हो उठता है। इस ज्योति के साथ आत्मा आंख से, सिर से या शरीर के किसी और भाग से निकल जाता है। आत्मा के निकलने के साथ-साथ प्राण पीछे-पीछे निकलते हैं। प्राण के निकलने के साथ-साथ इन्द्रियां पीछे-पीछे निकलती हैं।

जीव मरते समय सविज्ञान हो जाता है। जीवन का सारा खेल उसके सामने आ जाता है। यह विज्ञान उसके साथ साथ जाता है। ज्ञान, कर्म और पहले जन्मों की प्रज्ञा (बुद्धि, वासना-स्मृति-संस्कार)- ये तीनों भी उसके साथ जाते हैं।

जैसे सुंडी तिनके के अन्त पर पहुँचकर दूसरे तिनके को सहारे के तौर पर पकड़ कर अपने आप को खींच लेती है, इसी प्रकार यह आत्मा इस शरीर रूपी तिनके को परे फेंक कर दूसरे शरीर रूपी तिनके का सहारा लेकर अपने आपको खींच लेता है।

मनुष्य जैसा कर्म करता है वैसा ही हो जाता है। अच्छे कर्म करने से अच्छा, बुरे कर्म करने से बुरा, पुण्य कर्म करने से पुण्य आत्मा, पाप कर्म करने से पापात्मा हो जाता है।

आत्मा काममय है। जैसी कामना होती है वैसा ही प्रयत्न होता है, जैसा प्रयत्न होता है वैसा ही कर्म होता है और जैसा कर्म होता है वैसा ही फल होता है।

आत्मा में परमात्मा के दर्शन कर लेना ही ब्रह्म-लोक को पा लेना है। यह आत्म-लोक ही ब्रह्म-लोक है।

ओम् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

अर्थ- वह ब्रह्म पूर्ण है। यह जगत भी पूर्ण है। पूर्ण ब्रह्म से ही यह पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है। पूर्ण से पूर्ण लेकर भी वह (ब्रह्म) पूर्ण बच जाता है।

निरुक्त में हृदय- हृ-द-य

हरति, ददाति, याति- लेता है, देता है, चलता है।

हृदय शरीर के अशुद्ध रक्त को लेकर उसे फेफड़ों द्वारा शुद्ध करता है, फिर शरीर को वापिस देता है। इसी लिए सदा गति करता रहता है।

शरीर के अन्दर जो अग्नि है, जिससे खाया हुआ अन्न पचता है वह वैश्वानर अग्नि है। कानों को बन्द करने से जो अन्दर का घोष सुनाई देता है। वह इसी वैश्वानर अग्नि का घोष (नाद) है।

जब मनुष्य मरने के आस पास होता है तब वह घोष सुनाई नहीं देता।

श्वेताश्वतर उपनिषद्

वह नित्य देव (परमात्मा) कहीं दूर नहीं, आत्मा में स्थित है। जैसे अग्नि जब अपने कारण में चली जाती है तब उसकी शकल तो दिखाई नहीं देती, पर उसका नाश नहीं होता। वह इन्धन में फिर ग्रहण की जा सकती है। इसी प्रकार शरीर में आत्मा और परमात्मा दोनों को ग्रहण किया जा सकता है।

जैसे तिलों में तेल, दही में घी, जल के झरनों में जल और अरणी नाम की लकड़ी में आग रहती है। और तिलों को पीड़ने से, दही को बिलोने से, स्रोतों को खोदने से, अरणियों को रगड़ने से ये प्रकट होते हैं। वैसे ही जीवात्मा में परमात्मा निहित है और वहीं वह मिलता है। सत्य और तप (प्रयास) से उसे जाना जा सकता है।

जैसे दूध के कण-कण में घी व्याप्त है, उसी प्रकार ब्रह्माण्ड के कण-कण में ब्रह्म व्याप्त है।

जो भगवान के रचे सृष्टि-क्रम के साथ अपने को नहीं जोड़ता वह ऐसे गिर जाता है जैसे प्रसव से पूर्व बच्चा, मानों उसका गर्भपात हो जाता है। जैसे रथ में लगे पुष्ट घोड़ों को वश में किया जाता है, वैसे विद्वान व्यक्ति सावधान होकर प्राणायाम के द्वारा मन को वश में करे।

जैसे मिट्टी से लतपत सोने की डली धोने पर शुद्ध होकर चमकने लगती है, उसी प्रकार ब्रह्म के स्वरूप को देखकर देहधारी जीवात्मा सफल मनोरथ हो, दुःख-चिन्ता से रहित हो जाता है।

जो भगवान अग्नि में है, जो जलों में है, जो सभी लोकों में रमा हुआ है, जो औषधियों में है, जो वनस्पतियों में है, उस देव को नमस्कार हो, नमस्कार हो।

कर्मफल देने वाला ब्रह्म एक ही है, दूसरा कोई नहीं है। वह अपनी शक्तियों से इन सब लोकों का स्वामी है। प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर वह स्थित है। सृष्टि को बनाकर वही इसकी रक्षा करता है। अन्त में वही इसे समेट लेता

है।

सब जगह उस परमात्मा का मुख है, सिर है, गर्दन है। सब प्राणियों की हृदय रूपी गुफा में वह विद्यमान है। वह भगवान सर्वव्यापी है, सब जगह पहुँचा हुआ है।

उसके पांव नहीं है, पर वह शीघ्रगामी है। उसके हाथ नहीं हैं, पर वह पकड़ लेता है। उसके आँख नहीं है, पर वह देख लेता है। उसके कान नहीं हैं, पर वह सुन लेता है। जो कुछ जानने योग्य है, उसको जान लेता है। वह सूक्ष्म से सूक्ष्म है, बड़े से बड़ा है।

नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्च न मध्ये परिजग्रभत्।

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः। (यजुर्वेद 32-2, 3)

अर्थ- उस परमात्मा को कोई ऊपर से नहीं पकड़ सकता, कोई इधर-उधर से या बीच से भी नहीं पकड़ सकता। जिसका नाम बड़े यशवाला है, उसकी कोई प्रतिमा (मूर्ति) नहीं हो सकती। उसकी किसी दूसरी वस्तु से तुलना नहीं हो सकती।

सूर्य अन्न आदि को पकाता है। प्रत्येक अन्न का जो स्वभाव है, उसी के अनुसार उसे पकाता है- आम को आम और अनार को अनार। इसी प्रकार भगवान भी मनुष्य, पशु, पक्षी आदि सब योनियों को उनके अपने अपने स्वभाव के अनुसार परिपक्व करता है।

आत्मा का आकार- अगर बाल के अगले हिस्से के सौ भाग किए जाएं, फिर उन सौ में से एक भाग के सौ भाग किए जाएं तो उसका उतना भाग जीव का समझना चाहिए। इतना सूक्ष्म रूप होते हुए भी जीवात्मा अत्यन्त सामर्थ्य वाला माना गया है।

उसे (परमात्मा को) अपने लिए कुछ भी नहीं करना। वह जो कुछ करता है उसके लिए उसे साधनों की आवश्यकता नहीं। उसकी परम शक्ति है, नानाविध शक्ति है। उसमें ज्ञान, बल, क्रिया- ये तीनों स्वाभाविक हैं। किसी अन्य कारण पर वह अश्रित नहीं है।

संसार में उसका कोई पति, स्वामी या रक्षक नहीं है। उसे कोई उत्पन्न करने वाला भी नहीं है। उसका कोई नियन्ता भी नहीं है।

वह एक बीज रूप प्रकृति को अनेक बना देता है।

उपनिषदों पर महत्त्वपूर्ण टिप्पणियाँ

German Philosopher Arthur Schopenhauer says, "In the whole world there is no study so beneficial and so elevating as that of Upnishads. It has been the solace of my life, it will be the solace of my death."

जर्मन दार्शनिक आर्थर शोपनहार कहता है- ''सारे संसार मे कोई भी स्वाध्याय इतना लाभकारी और उन्नत करने वाला नहीं है जितना कि उपनिषदों का स्वाध्याय हैं। जीवनभर मुसीबत के समय मुझे इससे हौसला मिलता रहा है। मृत्यु के समय भी मुझे इससे धैर्य मिलेगा।''

Professor Max Muller, a Philosopher who was born in Germany and studied and lived in England says, "If these words of Schopenhauer require any endorsement, I should willingly give it as the result of my own experience during a long life devoted to the study of many philosophies and many reglions."

प्रोफैसर मैक्स मूलर, एक दार्शनिक जो जर्मनी में पैदा हुआ था, परन्तु इंग्लैंड में पढ़ा और वहां रहा था, कहता है – ''मैंने लम्बे समय तक बहुत से दर्शनों तथा बहुत से पन्थों का स्वाध्याम किया है, उस अनुभव के आधार पर मैं शोपनहार के इन शब्दों का इच्छापूर्वक समर्थन करता हूँ।''

औरंगजेब का भाई दारा शिकोह उपनिषदों से इतना अधिक प्रभावित था कि उसने उपनिषदों का फारसी भाषा में अनुवाद किया था। औरंगजेब उसे काफिर कहता था।

मनुस्मृति के महत्त्वपूर्ण उपदेश

1. **विद्वद्भिः सेवितः सद्भिः नित्यं अद्वेषरागिभिः।**
हृदयेन अभ्यनुज्ञातः यो धर्मः तं निबोधत।। (1-120)

अर्थ- जिसका सेवन रागद्वेष रहित विद्वान लोग नित्य करें, जिसको हृदय अर्थात् आत्मा से सत्य कर्तव्य जानें वही धर्म माननीय और करणीय है।

2. **कामात्मता न प्रशस्ता न चैव इहस्त्यकामता।**
काम्यो हि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः।। (1-121)

अर्थ- क्योंकि इस संसार में अत्यन्त कामात्मता और निष्कामता श्रेष्ठ नहीं है। वेदार्थज्ञान और वेदोक्त कर्म ये सब कामना से ही सिद्ध होते हैं।

3. **वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।**
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षात् धर्मस्य लक्षणम्।। (1-131)

अर्थ- वेद, स्मृति, सत्पुरुषों का आचार और अपने आत्मा के ज्ञान से अविरुद्ध प्रियाचरण- ये चार धर्म के लक्षण हैं अर्थात् इन्हीं से धर्म लक्षित होता है।

4. **न उच्छिष्टं कस्यचित् दद्यात् च एव तथान्तरा।**
न चैवात्यशनं कुर्यात् न चोच्छिष्टः क्वचिद् व्रजेत्। (2-31)

अर्थ- न किसी को अपना जूठा पदार्थ दे और उसी प्रकार न किसी के भोजन के बीच आप खावे, न अधिक भोजन करे और न भोजन किए पश्चात् हाथ मुख धोये बिना कहीं इधर-उधर जाए।

5. **इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।**
संयमे यत्नमातिष्ठेत् विद्वान्यन्ता इव वाजिनाम्। (2-63)

अर्थ- जैसे विद्वान् सारथी घोड़ों को नियम में रखता है वैसे मन और आत्मा को खोटे कार्यों में खेंचने वाले विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों के निग्रह में प्रयत्न सब प्रकार से करे।

6. **पूर्वां संध्यां जपन् तिष्ठन्नैषम् एनः व्यपोहति।**
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम।। (2-77)

अर्थ- प्रातःकालीन संध्या में बैठकर जप करके रात्रिकालीन मानसिक मलीनता या दोषों को दूर करता है। सायंकालीन संध्या करके दिन में संचित मानसिक मलीनता या दोषों को नष्ट करता है।

7. **न अरुंतुदः स्यात् आर्तः अपि न परद्रोहकर्मधीः।**
यथास्य उद्विजते वाचा न अलोक्यां तामुदीरयेत्।। (2-136)

अर्थ- मनुष्य स्वयं दुखी होता हुआ भी किसी दूसरे को कष्ट न पहुँचाने, न दूसरे के प्रति ईर्ष्या या बुरा करने की भावना मन में लाये। जिस वचन से कोई दुखी हो ऐसी वाणी न बोले।

8. **स्वभाव एष नारीणां नराणां इह दूषणम्।**
अतः अर्थात् प्रमाद्यन्ति प्रमदासु विपश्चितः।। (2-188)

अर्थ- इस संसार में यह स्वाभाविक ही है कि स्त्री पुरुषों का परस्पर के संसर्ग से दूषण हो जाता है- दोष लग जाता है। इस कारण से बुद्धिमान व्यक्ति स्त्रियों के साथ व्यवहारों में कभी असावधानी नहीं करते।

9. **मात्रा स्वस्त्रा दुहित्रा वा न विविक्तासनः भवेत्।**
बलवान् इन्द्रियग्रामः विद्वांसमपि कर्षति।। (2-190)

अर्थ- माता, बहिन अथवा पुत्री के साथ भी एकान्त आसन पर न बैठे या न रहे। शक्तिशाली इन्द्रियां विवेकी व्यक्ति को भी खींचकर अपने वश में कर लेती हैं।

10. **पितृभिः भ्रातृभिः चैताः पतिभिः देवरैः तथा।**
पूज्या भूषयितव्याः च बहुकल्याणामीप्सुभिः।। (3-55)

अर्थ- पिता, भाई, पति और देवर को योग्य है कि अपनी कन्या, बहन, स्त्री और भौजाई आदि स्त्रियों की सदा पूजा करें अर्थात् यथायोग्य मधुरभाषण, भोजन, वस्त्र, आभूषण आदि से प्रसन्न रखें। जिनको कल्याण को इच्छा हो वे स्त्रियों को क्लेश कभी न देवें।

11. **यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।**
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया।। (3-56)

अर्थ- जिस कुल में नारियों की पूजा अर्थात् सत्कार होता है उस कुल में दिव्यगुण- दिव्य भोग और उत्तम सन्तान होते हैं। जिस कुल में स्त्रियों का सम्मान नहीं होता वहाँ जानो उनकी सब क्रिया निष्फल है।

12. **सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।**
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।। (3-60)

अर्थ - जिस कुल में पत्नी से प्रसन्न पति और पति से पत्नी सदा प्रसन्न रहती है

उसी कुल में निश्चित कल्याण होता है।

13. **न लोकवृत्तं वर्त्तेत वृत्तिहेतो कथञ्चन।**
अजिह्मामअशठां शुद्धाम् जीवेत् ब्राह्मणजीविकाम्।। (4-11)

अर्थ- जीविका के लिए भी कभी शास्त्रविरुद्ध लोकाचार का बर्ताव न करे। जिसमें किसी प्रकार की कुटिलता, मूर्खता, झूठ या अधर्म न हो उस वेदोक्त कार्य सम्बन्धी जीविका को करे।

14. **बुद्धिवृद्धिकराण्याशु धन्यानि च हितानि च।**
नित्यं शास्त्राण्यवेक्षेत निगमान् चैव वैदिकान्।। (4-19)

अर्थ- जो धर्म-धन और बुद्धि आदि को अत्यन्त शीघ्र बढ़ाने वाले हितकारी शास्त्र हैं उनको और वेद के भागों की विद्याओं को नित्य देखा करो।

15. **पाखण्डिनो विकर्मस्थान् बैडालवृत्तिकान् शठान्।**
हैतुकान् बकवृत्तीन् च वाङ्मात्रेणपि नार्चयेत्।। (4-30)

अर्थ- पाखण्डी, वेदों की आज्ञा के विरुद्ध चलने वाले, बिल्ले की मानसिकता वाले, धोखेबाज, बकवास करने वाले और बगुलाभक्त मनुष्यों का वाणी से भी सत्कार नहीं करना चाहिए।

16. **क्लृप्तकेशनखश्मश्रूः, दान्तः शुक्लाम्बरः शुचिः।**
स्वाध्याये चैव युक्तः स्यात् नित्यं आत्महितेषु च।। (4-35)

अर्थ- केश, नाखून और दाढ़ी कटवाता रहे, सहनशील रहे, सफेद कपड़े पहने, सफाई रखे और प्रतिदिन वेदों के स्वाध्याय में और अपनी उन्नत्ति में लगा रहे।

17. **न उपगच्छेत् प्रमत्तोऽपि स्त्रियमार्तवदर्शने।**
समानशयने चैव न शयीत तथा सह।। (4-40)

अर्थ- कामातुर होता हुआ भी मासिक धर्म के दिनों में स्त्री से उपभोग न करे और उसके साथ एक बिस्तर पर न सोए।

18. **न आत्मानमवमन्येत पूर्वाभिरसमृद्धिभिः।**
आमृत्योः श्रियमन्विच्छेत् नैनाम्मन्येत दुर्लभाम्।। (4-137)

अर्थ- पहले धनवान हो फिर गरीब हो जाएं, उससे अपनी आत्मा का अपमान न करें, किन्तु मरने तक धन की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ किया करें। लक्ष्मी को दुर्लभ न समझें।

19. **सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।**

प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः।। (4-138)

अर्थ - सदा प्रिय सत्य दूसरे का हितकारक बोले, अप्रिय सत्य न बोले। दूसरे को प्रसन्न करने के लिए झूठ न बोले। यह सनातन धर्म है।

20. **भद्रं भद्रमिति ब्रूयात् भद्रमिति एव वा वदेत्।**
शुष्कवैरं विवादं च न कुर्यात् केनचित् सह।। (4-139)

अर्थ- सदा सबके हितकारी वचन बोला करे। जो-जो दूसरे का हितकारी हो और बुरा भी माने तथापि कहे बिना न रहे। बिना अपराध किसी के साथ विरोध या विवाद न करे।

21. **यत्कर्म कुर्वतोऽस्य स्यात् परितोषोऽन्तरात्मनः।**
तत् प्रयत्नेन कुर्वीत विपरीतं तु वर्जयेत्।। (4-161)

अर्थ- जिस कर्म के करने से मनुष्य की आत्मा को सन्तुष्टि एवं प्रसन्नता अनुभव हो उस-उस कर्म को प्रयत्नपूर्वक करे। जिसमें सन्तुष्टि एवं प्रसन्नता न हो उस कार्य को न करे।

22. **न सीदन्नप्यधर्मेण मनः अधर्मे निवेषयेत्।**
अधार्मिकाणां पापानामाशु पश्यन् विपर्ययम्।। (4-171)

अर्थ- धर्म आचरण से कष्ट उठाता हुआ भी अधर्म में मन को न लगावे। अधार्मिक पापियों का शीघ्र ही विनाश होता है।

23. **नाधर्मः चरितो लोके सद्यः फलति गौरिव।**
शनैः आवर्त्तमानस्तु कर्त्तुः मूलानि कृन्तति।। (4-172)

अर्थ- इस संसार में जैसे गाय की सेवा का फल दूध आदि शीघ्र प्राप्त नहीं होता, वैसे ही किए हुए अधर्म का फल भी शीघ्र नहीं होता। किन्तु धीरे-धीरे अधर्मकर्त्ता के सुख के मूलों को काट देता है।

24. **न पाणिपादचपलः न नेत्रचपलः अनृजुः।**
न स्यात् वाक्चपलः चैव न परद्रोहकर्मधीः।। (4-177)

अर्थ- हाथ-पैरों से चंचलता के कार्य न करे, आँखों से चंचलतायुक्त काम न करे, कुटिलता न करे, वाणी से चपलता न करे और दूसरों की हानि या द्वेष के कार्यों में मन लगाने वाला न बने।

25. **यथा प्लवेनोपलेन निमज्जति उदके तरन्।**
तथा निमज्जतः अधस्तात् अज्ञौ दातृप्रतिच्छकौ।। (4-194)

अर्थ- जैसे पत्थर की नौका पर बैठकर जल में तरने वाला डूब जाता है वैसे अज्ञानी दाता और गृहीता दोनों दुख को प्राप्त होते हैं।

26. सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते।
वार्यन्न-गो-मही-वासः-तिल-कांचन्सर्पिषाम्।। (4.233)

अर्थ- संसार में जितने दान हैं अर्थात् जल, अन्न, गौ, पृथिवी, वस्त्र, तिल, सुवर्ण और घी आदि सब दानों से वेदविद्या का दान अति श्रेष्ठ है।

27. अनुमन्ता विशंसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः।। (5-51)

अर्थ- मारने की आज्ञा देने वाला, मांस को काटने वाला, पशु को मारने वाला, पशुओं को मारने के लिए मोल लेने वाला और बेचने वाला, मांस को पकाने वाला, परोसने वाला और खाने वाला- ये सब हत्यारे और पापी हैं।

28. सर्वेषाम् एव शौचानामर्थशौचं परं स्मृतम्।
योऽर्थे शुचिः हि स शुचिः न मृद्वारिशुचिः शुचिः।। (5.106)

अर्थ- जो धर्म ही से पदार्थों का संचय करना है वही सब पवित्रताओं में उत्तम पवित्रता है। जल, मिट्टी आदि से जो पवित्रता होती है, वह धर्म के समान उत्तम नहीं होती।

29. अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्ध्यति।। (5-109)

अर्थ- जल से शरीर के बाहर के अंग, सत्याचरण से मन, विद्या और तप अर्थात् सब प्रकार के कष्ट भी सहकर धर्म ही के मार्ग पर चलने से जीवात्मा, ज्ञान से बुद्धि दृढ़ निश्चय पवित्र होती है।

30. पति या न अभिचरति मनः-वाग्देहसंयता।
सा भर्तृ लोकमाप्नोति सद्भिः साध्वीति च उच्यते।। (5-165)

अर्थ - जो स्त्री मन, वाणी और शरीर को संयम में रखकर पति के विरुद्ध आचरण नहीं करती वह पति के हृदय में आदर का स्थान पाती है और श्रेष्ठ लोग अच्छी पत्नी कहकर उसकी प्रषंसा करते हैं।

31. अधर्मप्रभवं चैव दुःखयोगं शरीरिणाम्।
धर्मार्थप्रभवं चैव सुखसंयोगमक्षयम्। (6-64)

अर्थ - यह निश्चित है कि प्राणियों को सभी प्रकार के दुःख अधर्म से ही

मिलते हैं और अक्षय सुखों की प्राप्ति केवल धर्म से ही होती है।

32. दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्।। (6-71)

अर्थ- जैसे अग्नि में तपाने और गलाने से धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं वैसे ही प्राणों के निर्ग्रह से मन आदि इन्द्रियों के दोष भस्मीभूत हो जाते हैं।

33. धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।। (6-92)

अर्थ-

1. धृति- सदा धैर्य रखना
2. क्षमा- निन्दा-स्तुति, मान-अपमान, हानि-लाभ में सहनशील रहना
3. दमः- मन को अधर्म से हटाकर धर्म में लगाना
4. अस्तेय- चोरी त्याग अर्थात् बिना आज्ञा के तथा छल-कपट से दूसरे का पदार्थ न लेना
5. शौच- राग-द्वेष छोड़के मन की तथा पानी आदि से बाहर की पवित्रता
6. इन्द्रिय निग्रह- इन्द्रियों को अधर्म से हटाके धर्म में लगाना
7. धीः - बुद्धिनाशक मादक द्रव्य, दुष्टों का संग, आलस्य आदि छोड़के श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन, सज्जनों का संग आदि से बुद्धि बढ़ाना।
8. विद्या- यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना और उनसे यथायोग्य उपकार लेना।
9. सत्य - जो पदार्थ जैसा हो उसको वैसा ही मानना, बोलना और वैसा ही करना।
10. अक्रोध - क्रोध को छोड़के शान्ति के गुणों को अपनाना।

34. नित्यम् उद्यतदण्डस्य कृत्स्नं उद्विजते जगत्।
तस्मात् सर्वाणि भूतानि दण्डेन एवं प्रसाधयेत्।। (7-103)

अर्थ- जिस राजा के राज्य में सर्वदा दण्ड प्रयोग का निश्चय रहता है उससे सारा जगत् भयभीत रहता है। इसीलिए राजा सब प्राणियों को दण्ड के भय से अनुशासन में रखे।

35. यथा उद्धरति निर्दाता कक्षं धान्यं च रक्षति।
तथा रक्षेत् नृपो राष्ट्रं हन्यात् च परिपन्थिनः।। (7-110)

अर्थ- जैसे धान्य का निकालने वाला छिलकों को अलग कर धान्य की रक्षा

करता है वैसे राजा चोरों, डाकुओं को मारे और राज्य की रक्षा करे।

36. **राज्ञो हि रक्षाधिकृताः परस्वादायिनः शठाः।**
भृत्याः भवन्ति प्रायेण तेभ्यो रक्षेदिमाः प्रजाः।। (7-123)

अर्थ- प्रायः राजा के द्वारा प्रजा की सुरक्षा के लिए नियुक्त राजसेवक दूसरों के धन के लालची अर्थात् रिश्वतखोर और ठग या धोखा करने वाले हो जाते हैं। राजा ऐसे राजपुरुषों से अपनी प्रजाओं की रक्षा करे अर्थात् ऐसे प्रयत्न करे कि वे प्रजाओं के साथ ऐसा बर्ताव न कर पाएं।

37. **ये कार्यिकेभ्यः अर्थमेव गृह्णीयुः पापचेतसः।**
तेषां सर्वस्वमादाय राजा कुर्यात्प्रवासनम्।। (7.124)

अर्थ- पापी मन वाले, रिश्वतखोर और ठग राजपुरुष यदि काम कराने वालों और मुकद्दमे वालों से रिश्वत ले ही लें तो उनका सब कुछ अपहरण करके राजा उन्हें देश निकाला दे दे।

38. **यथाल्पाल्पमदन्त्याद्यम् वार्योकोवत्सषट्पदाः।**
तथाल्पाल्पो ग्रहीतव्यो राष्ट्राद्राज्ञाब्दिकः करः।। (7.129)

अर्थ- जैसे जोंक, बछड़ा और भंवरा थोड़े-थोड़े भोग्य पदार्थों को ग्रहण करते हैं, वैसे राजा प्रजा से थोड़ा-थोड़ा वार्षिक कर लेवे।

39. **यत्र धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं यत्रानृतेन च।**
हन्यते प्रेक्षमाणानां हतास्तत्र सभासदः।। (8.14)

अर्थ- जिस सभा में बैठे हुए सभासदों के सामने अधर्म से धर्म का और झूठ से सत्य का हनन होता है, उस सभा में सब सभासद मरे से ही हैं।

40. **धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।**
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्।। (8.15)

अर्थ- मरा हुआ धर्म मारने वाले का नाश करता है, रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करने वाले की रक्षा करता है। इसलिए धर्म का हनन नहीं करना चाहिए इस डर से कि मरा हुआ धर्म हमको न मार डाले।

41. **एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः।**
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति।। (8-17)

अर्थ - इस संसार में धर्म ही मित्र है जो मृत्यु के पश्चात् भी साथ चलता है। और सब पदार्थ वा संगी शरीर के नाश के साथ ही नाश हो जाते हैं, अर्थात्

साथ छोड़ देते हैं।

42. एकोऽहमस्मीत्यात्मानं यत्त्वं कल्याण मन्यसे।
नित्यं स्थितः ते हृद्येषः पुण्यपापेक्षिता मुनिः।। (8-91)

अर्थ- हे कल्याण की इच्छा करने हारे पुरुष! जो तू 'मैं अकेला हूँ' ऐसा अपने आत्मा में मानता है, सो ठीक नहीं। तेरे हृदय में पुण्य-पाप का देखने वाला परमात्मा सदा स्थित है।

43. ब्याज लेने वाला मनुष्य सवा रुपया सैंकड़ा मासिक ब्याज ले, इससे अधिक नहीं। (8-140)

44. किसी वस्तु को खरीदकर वा बेचकर जिस व्यक्ति को पश्चाताप हो वह दस दिन के भीतर उस वस्तु को लौटा दे अथवा लौटा ले। (8-222)

45. जिस अपराध में साधारण मनुष्य पर एक रुपया दण्ड हो उसी अपराध में राजा पर एक हजार रुपया दण्ड हो अर्थात् साधारण मनुष्य से राजा पर एक हजार गुणा दण्ड होना चाहिए। (8-336, 337, 338)

एक जैसे अपराध में ब्राह्मण पर शूद्र से आठ गुणा दण्ड हो।

46. नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन।
प्रकाशं वाऽप्रकाशं वा मन्युस्तं मन्युमृच्छति।। (8-351)

अर्थ- दुष्ट पुरुषों के मारने में हन्ता को पाप नहीं लगता, चाहे प्रसिद्ध मारे चाहे अप्रसिद्ध (सबके सामने या एकान्त में) क्योंकि क्रोध को क्रोध से मारना जानो क्रोध से क्रोध की लड़ाई है।

47. अपनी स्त्री को धन की संभाल और उसके व्यय की जिम्मेदारी में, घर एवं घर के पदार्थों की शुद्धि में, अग्निहोत्र आदि धर्म सम्बंधी कार्यों में, भोजन पकाने में, घर की सभी वस्तुओं की देखभाल में लगाए। (9-11)

48. सन्तानोत्पत्ति धर्म-कार्य, उत्तम सेवा और रति तथा अपना और पितरों का जितना सुख है वह सब स्त्री ही अधीन होता है। (9-28)

49. विवाहित स्त्री-पुरुष सदा ऐसा यत्न करें कि किसी भी प्रकार से वे एक दूसरे से अलग न होवें, सम्बन्ध विच्छेद न हो पाए। (9-102)

50. जड़ वस्तुओं से बाजी लगाकर खेले जाने वाला और चेतन प्राणियों को दांव पर लगाकर खेले जाने वाला जूआ-ये प्रत्यक्ष में होने वाली चोरी हैं। राजा इनको समाप्त करने के लिए सदा प्रयत्नशील रहे। (9-221, 222)

51. द्यूतमेतत् पुराकल्पे दृष्टं वैरकरं महत्।
तस्माद् द्यूतं न सेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान्।। (9-227)

अर्थ- यह जूआ अब से पहले समय में भी महान शत्रुता पैदा करने वाला देखा गया है। इसलिए बुद्धिमान मनुष्य हंसी मजाक में भी जूआ न खेले।

52. अदण्डनीय को दण्ड देने पर राजा को जितना अधर्म होना शास्त्र में माना गया है उतना ही दण्डनीय को छोड़ने में अधर्म होता है। न्यायानुसार दण्ड देना ही धर्म है। (9-249)

53. रिश्वतखोर, भय दिखाकर धन लेने वाले ठग, जूआ से धन लेने वाले, 'तुम्हें पुत्र या धन की प्राप्ति होगी' इत्यादि मांगलिक बातों को कहकर धन लेने वाले, साधु-संन्यासी आदि भद्ररूप धारण करके धन लेने वाले, हाथ आदि देखकर भविष्य बताकर धन लेने वाले, धन-वस्तु आदि लेकर गलत तरीकों से काम करने वाले उच्च राजकर्मचारी, अनुचित मात्रा में धन लेने वाले या अयोग्य चिकित्सक, अनुचित मात्रा में धन लेने वाले शिल्पी, धन ठगने में चतुर वेश्याएं इत्यादियों को और दूसरे जो श्रेष्ठों का वेश या चिह्न धारण करके गुप्तरूप से विचरण करने वाले दुष्ट या बुरे व्यक्ति हैं - राजा उनको प्रजाओं को पीड़ित करने वाले चोर समझे। (9-258, 259, 260)

54. जिस प्रकार मृत्यु समय आने पर प्रिय और शत्रु सबको मारती है, राजा को उसी प्रकार अपराध करने पर प्रिय-शत्रु सभी प्रजाओं को न्यायपूर्वक दण्ड देना चाहिए। (9-307)

55. शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवं तु विद्यात् वैश्यात् तथैव च।। (10-65)

अर्थ- शूद्र ब्राह्मण और ब्राह्मण शूद्र हो जाता है, अर्थात् गुणकर्मों के अनुकूल ब्राह्मण हो तो ब्राह्मण रहता है तथा जो ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के गुण वाला हो तो वह क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हो जाता है। वैसे शूद्र भी मूर्ख हो तो वह शूद्र रहता है और जो उत्तम गुणयुक्त हो तो यथायोग्य ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाता है। वैसे ही क्षत्रिय और वैश्य के विषय में भी जान लेना।

56. यथा यथा मनस्तस्य दुष्कृतं कर्म गर्हति।
तथा तथा शरीरं तत्तेनाधर्मेण मुच्यते।। (11-229)

अर्थ- मनुष्य का मन-आत्मा जैसे जैसे किए हुए पाप को धिक्कारता है, वैसे

वैसे उसका शरीर उस अधर्म से मुक्त होता जाता है अर्थात् बुरे कर्म को बुरा मानकर उसके प्रति ग्लानि होने से बुरे कार्य करने से निवृत्ति होती है।

57. यह जीव मन से जिस शुभ वा अशुभ कर्म को करता है, उसको मन से, वाणी से किए को वाणी से और शरीर से किए को शरीर से सुख-दुःख को भोगता है। (12-8)

58. सत्त्व, रज, तम- जो गुण जीवों के शरीर में अधिकता से वर्तता है वह गुण उस जीव को अपने जैसा कर लेता है। (12-25)

59. सत्त्वगुण- जब आत्मा में ज्ञान, प्रसन्नता, वेदों का अभ्यास, धर्मानुष्ठान, ज्ञान की वृद्धि, पवित्रता की इच्छा, इन्द्रिय निग्रह हो, मन प्रसन्न, शान्त हो।

रजोगुण- जब राग-द्वेष में आत्मा लगे, जब आत्मा और मन दुःख संयुक्त, प्रसन्नतारहित, विषयों मे इधर-उधर गमनागमन में लगे, धैर्यत्याग, असत् कर्मों का ग्रहण, निरन्तर विषयों में प्रीति हो, अर्थ संग्रह की इच्छा हो।

तमोगुण- जब आत्मा में अज्ञान रहे, सांसारिक पदार्थों में फंसा हुआ आत्मा और मन हो, जब आत्मा और मन में कुछ विवेक न हो, विषयों में आसक्त, तर्क-वितर्क रहित, जानने के योग्य न हो, अत्यन्त आलस्य हो। (12-26 से 32) तमोगुण से रजोगुण और रजोगुण से सतोगुण श्रेष्ठ है।

60. जो मनुष्य सात्विक हैं, वे देव अर्थात् विद्वान्, जो रजोगुणी होते हैं वे मध्यम मनुष्य और जो तमोगुणी होते हैं वे नीच गति को प्राप्त होते हैं। 12.40

61. यथा जातबलो वह्निः दहति आर्द्रानपि द्रुमान्।
तथा दहति वेदज्ञः कर्मजं दोषमात्मनः।। (12.101)

अर्थ- जैसे धधकती हुई आग गीले वृक्षों को भी जला देती है, उसी प्रकार वेद ज्ञाता विद्वान अपने कर्मों से उत्पन्न होने वाले दुष्ट संस्कारों को मिटा देता है।

62. आर्ष धर्मोपदेशञ्च वेदशास्त्राविरोधिना।
यस्तर्केणानुसंधते स धर्म वेद नेतरः।। (12-106)

अर्थ- जो मनुष्य ऋषिप्रोक्त धर्मोपदेश अर्थात् धर्मशास्त्र का वेदशास्त्र के अनुकूल तर्क के द्वारा अनुसंधान करता है, वही धर्म के तत्त्व को समझ पाता है, और कोई नहीं।।

न्याय और वैशेषिक दर्शन

1. शास्त्र को जानने वाला- शास्त्री। दर्शनों को जानने वाला- दार्शनिक।

2. वेदों की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए किसी दूसरे प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती है जैसे सूर्य स्वत: प्रमाण है।

3. परमात्मा गुरुओं का भी गुरु है क्योंकि वह वेद ज्ञान देने वाला है।

4. वेद के शब्दों के आधार पर ही संसार के पदार्थों की रचना हुई है अर्थात् शब्दों के साथ अर्थ का सम्बन्ध है, अत: वेद स्वत: प्रमाण हैं।

5. जैन ग्रन्थ प्राकृत भाषा और संस्कृत में लिखे हैं। बौद्ध ग्रन्थ पाली भाषा और संस्कृत भाषा में लिखे हैं।

6. न्याय का आचरण करने वाले व्यक्ति की सहायता तो मनुष्य ही नहीं अपितु पशु-पक्षी भी करते हैं। अन्याय के रास्ते पर चलने वाले व्यक्ति का साथ तो सगा भाई भी छोड़ देता है।

7. दु:खों से पूर्ण रूप से छूट जाने को मोक्ष कहते हैं।

8. प्रत्येक प्राणी मृत्यु से घबराता है। पिछले जन्म की मृत्यु के समय होने वाले कष्ट का अनुभव प्रत्येक प्राणी को मृत्यु से डराता है।

9. जीवात्मा कर्मों के फलों के प्रति आसक्ति रखता है, भोग-विलास के प्रति राग के कारण फलों को भोगने के लिए बार-बार शरीर धारण करता है।

10. आसक्ति के कारण राग, असहनशीलता के कारण द्वेष तथा मिथ्या ज्ञान के कारण मोह होता है।

11. कर्म स्वयं जड़ है, वह अपना फल स्वयं नहीं दे सकता, इसलिए ईश्वर की सत्ता को मानना होता है।

12. बिना कारण के कोई भी कार्य नहीं होता है।

13. कर्मफल में शीघ्रता और विलम्ब- किसी वृक्ष का फल कुछ सालों के बाद लगता है- गेहूँ आदि पौधे का फल कुछ महीनों में प्राप्त हो जाता है।

14. यम, नियम के आचरण से राग, द्वेष, मोह आदि दोषों को दूर करने में सहायता मिलती है।

15. बाह्य विषयों की ओर जाने वाली मन की वृत्तियों को वैराग्य और निरन्तर अभ्यास के द्वारा रोका जाता है जो आत्म साक्षात्कार के लिए आवश्यक एवं उपयोगी है।

16. निरन्तर ध्यान और आध्यात्मिक ग्रन्थों के अध्ययन और चिन्तन में लगे रहने से परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है।

17. पानी का अपना गुण ठण्डा है। आग के संसर्ग से गर्म हो जाता है। आग से संसर्ग हटने से पानी फिर ठण्डा हो जाता है। जमा हुआ घी आग के संसर्ग से तरल बन जाता है।

18. आकाश का गुण शब्द है।

19. शरीर में स्थित आत्मा की प्रेरणा से शरीर के हाथ आदि अंग काम करते हैं।

20. शरीर के बाहर भी क्रियाएं होती हैं। हवा से घास के तिनके हिलते हैं, चुम्बक के कारण लोहा खिंचा चला आता है। इसके लिए परमात्मा कारण है जो अदृश्य कारण है। पृथ्वी की गति, भूकम्प आदि ईश्वरीय व्यवस्था का परिणाम हैं।

21. पानी ऊपर से नीचे को बहता है। परन्तु सूर्य और हवा के साथ पानी ऊपर को जाकर बादल बनता है। वृक्षों में भी पानी नीचे से ऊपर को चढ़ता है।

22. आग की ज्वाला ऊपर की ओर जाती है, पानी ऊपर से नीचे को बहता है और हवा तिरछी बहती है।

23. अनुकूल पदार्थ की प्राप्ति होने पर मनुष्य सुख का अनुभव करता है तथा प्रतिकूल पदार्थ की प्राप्ति से दु:ख का अनुभव करता है।

24. मन अत्यधिक चंचल है।

25. जब मन बाह्य विषयों की ओर प्रवृत्त न होकर आत्मा में स्थित हो जाता है, तब एकमात्र आत्मचिन्तन में लग जाता है, मन एकाग्र हो जाता है। ऐसी स्थिति में शरीर को सुख-दु:ख नहीं होता। ऐसी स्थिति को ही योग या समाधि कहते हैं।

26. बाह्य विषयों से सम्पर्क टूटने पर मन की चंचलता समाप्त होती है।

27. शरीर से चेतन आत्मा पृथक् है जब साधक यह अनुभव करने लगता है तब मिथ्या ज्ञान से होने वाले कर्मों से वह निवृत्त हो जाता है। कर्मों से निवृत्ति होने से मनुष्य मोक्ष पाने में सफल हो जाता है।

28. धर्म का आचरण करने से मनुष्य की उन्नति होती है और अधर्म का आचरण करने से मनुष्य का पतन होता है।

29. जिस परमात्मा ने सृष्टि की रचना की है, वही परमात्मा सृष्टि के विषय में पूर्ण ज्ञान रखता है। इसलिए परमात्मा के ज्ञान वेद में कोई कमी नहीं है। वेदों में भ्रम या अज्ञान होने की कोई सम्भावना नहीं।

30. वेदों में जिन कर्मों के करने का उपदेश है, उनके करने से आत्मा की उन्नति तथा जिन कर्मो को न करने का उपदेश है उनके करने से पतन होता है।

31. जैसे मनुष्य अपनी उन्नति के लिए प्रयत्न करता है, वैसे ही दान देकर दूसरे की उन्नति में सहयोगी बनता है। दूसरे के कल्याण के लिए कर्म करने से आत्मा उन्नत होती है।

32. लोक कल्याण के लिए दान देना और लोक कल्याण के लिए दूसरों से दान लेना भी चाहिए। दूसरे के धन को परोपकार के काम में लगाना शुभ कर्म है।

33. मानव समाज के उत्थान के लिए परस्पर एक दूसरे को सहयोग देना चाहिए।

34. आत्म उन्नति को ध्यान में रखकर जो कर्म किए जाते हैं वे कर्म मोक्ष के साधन हैं।

35. जिससे लौकिक और पारलौकिक सुख प्राप्त हो, उसे धर्म कहते हैं।

36. पृथ्वी-जल-अग्नि-वायु आदि स्थूल पदार्थों और उनके परमाणुओं का यथार्थ ज्ञान भौतिक और आध्यात्मिक सुख का साधन बन जाता है।

37. जब प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से पदार्थों के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया जाता है उसे 'न्याय' कहते हैं। पदार्थों के यथार्थ स्वरूप को जानने की अभिलाषा का कारण तर्क होता है।

□□□□□

धधधध

सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त दर्शन

सांख्य दर्शनः-

1. यहां सांख्य का सम्बन्ध संख्या से नहीं है, अपितु 'सम्यक् ख्यानम्' अर्थात् 'विशेष विचार' है।

2. मूल का मूल ढूँढ़ना व्यर्थ है, क्योंकि जिसका कोई मूल न हो उसी को मूल कहा जाता है।

3. जिसमें जैसी शक्ति है वह वैसे ही कार्य उत्पन्न कर सकता है। पीपल के पेड़ से पीपल का पेड़ ही उत्पन्न हो सकता है। कार्य पूरी तरह कारण के गुण नहीं त्यागता।

4. कोई भी परिणाम निरर्थक नहीं है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जीवात्मा के लिए ही उत्पन्न हुआ है।

5. कर्म के अनुसार जीव को योनि और भोग प्राप्त होते हैं। पूरी सृष्टि की विचित्रता कर्मों की विचित्रता के कारण ही है।

6. हमारे कर्तव्य कर्म वे हैं जो हमारे आश्रम के लिए विहित हैं।

7. जो प्रमाण से दृष्ट है, उसका कल्पना से विरोध नहीं हो सकता।

8. संसार में दो प्रकार के तत्त्व हैं- जड़ और चेतन। दोनों के आपसी सहयोग से ही समस्त सृष्टि गतिशील और क्रियाशील होती है।

9. सभी भोग्य पदार्थ सृष्टि के भोगने के लिए ही निरन्तर बनते रहते हैं।

10. अभाव से भाव नहीं होता। पानी से मक्खन नहीं निकाला जा सकता।

11. प्रकृति जड़ है। वह स्वयं कोई क्रिया नहीं कर सकती। चेतन तत्त्व प्रभु की शक्ति के सहयोग से ही प्रकृति जगत की रचना करती है। मिट्टी जड़ पदार्थ है, जब तक कुम्हार इसका घड़ा आदि नहीं बनाता तब तक उसका कुछ नहीं बनता।

12. प्रकृति के भोग्य पदार्थ चेतन जीवात्मा के भोग के लिए ही हैं। जड़ पदार्थों का प्रयोग तो चेतन जीवात्मा ही कर सकता है।

13. जब साधक सब बाह्य विषयों से स्वयं को हटा लेता है तब वह

अधिक सुख और पूर्ण शान्ति को प्राप्त करके प्रसन्न रहता है। इस स्थिति में आत्मा अपने स्वरूप में लीन हो जाता है।

14. जन्म और मृत्यु के समय सूक्ष्म शरीर आत्मा के साथ ही रहता है। मोक्ष की प्राप्ति होने पर स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर से जीवात्मा स्वतन्त्र हो जाता है। विवेक ज्ञान की प्राप्ति होने पर मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

15. धारणा- मन को शरीर के किसी एक स्थान पर टिका कर एकाग्रता प्राप्त करना धारणा है। धारणा द्वारा ध्यान का अभ्यास करते रहने से समाधि की अवस्था तक पहुँचकर आत्म साक्षात्कार किया जा सकता है।

16. जीवन में अधिक वस्तुएं इकट्ठा करना, उनके प्रति मोह होने से साधना में बाधा पड़ती है। जिन वस्तुओं की आवश्यकता नहीं होती उनको प्रसन्नता से त्याग देने अथवा बांट देने में सुख और उल्लास की प्राप्ति होती है।

17. केवल चिन्तन-मनन करने से आत्म-ज्ञान प्राप्त नहीं होता, इसके लिए भौतिक विषयों की इच्छाओं का त्याग भी करना पड़ता है। जब दृढ़ संकल्प से इन को त्याग दिया जाता है तब मन शुद्ध और निर्मल होता जाता है और आत्म ज्ञान की अनुभूति होने लगती है।

18. जैसे मैले दर्पण से किसी का मुख मण्डल स्पष्ट दिखाई नहीं देता वैसे ही मैले अर्थात् अपवित्र मन से आत्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता। जब मन में किसी के प्रति राग-द्वेष की भावना रहती है तब भी आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होता।

19. चित्त व मन को सदा निर्मल और पवित्र रखने के लिए पुण्य कर्म अर्थात् श्रेष्ठ कर्मों को निरन्तर करते रहना चाहिए। यही सज्जनता व शिष्टाचार की पहचान है। केवल श्रेष्ठ व पुण्य कर्मों के करने से ही हमें परमात्मा के प्यार की अनुभूतियां होती हैं। इस से मन भी प्रसन्नता व उल्लास से सदा शान्त व सन्तुष्ट रहता है।

20. परमात्मा सत्-चित्-आनन्दस्वरूप है। जीवात्मा केवल सत् और चित् है, इसका स्वभाव आनन्द नहीं है। इसलिए इसे आनन्द प्राप्त करने के लिए बहुत दौड़-धूप करनी पड़ती है।

21. सुषुप्ति अवस्था में जब तमोगुण बढ़ जाता है तब प्राणी सुख-दु:ख का अनुभव नहीं करता। उस समय उसका बाहर के विषयों से सम्बन्ध नहीं

रहता। प्रातः काल जागने पर वह कहता है कि आज बहुत अच्छी नींद आई। सुषुप्ति में अमीर-गरीब, ज्ञानी-मूर्ख सबकी अवस्था एक समान होती है।

22. यम-नियम का निरन्तर अभ्यास करने से वैराग्य की अनुभूति होने लगती है।

23. स्फटिक मणि का अपना कोई रंग नहीं होता। उसके सामने जिस रंग का फूल रख दिया जाए वह उसी रंग का दिखाई देने लगता है। आत्मा का स्वरूप शुद्ध, निर्मल और पवित्र है। परन्तु बुद्धि उसके सामने जैसा विषय रखती है उसका स्वरूप वैसा ही दिखाई देने लगता है।

योग दर्शन

1. आत्मा और परमात्मा के मिलन को योग कहते हैं।

2. सृष्टि के निर्माण के बाद ऋषियों ने वेद के रूप में ईश्वर से ही ज्ञान प्राप्त किया था। इस लिए ईश्वर गुरुओं का भी गुरु है।

3. अपने कर्त्तव्यों को धर्म के अनुसार पूर्ण करने से दुःखों की निवृत्ति हो जाती है। फिर सहज में मोक्ष की प्राप्ति का आनन्द प्राप्त होने लगता है।

4. सुखी व सम्पन्न व्यक्ति के साथ मित्रता के भाव रखे।
दुःखी व्यक्ति के प्रति दया के भाव रखे।
सज्जन के प्रति मन में प्रसन्नता व उल्लास के भाव रखे।
पापियों के प्रति उपेक्षा का भाव रखे।

5. सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों को धैर्य व संयम से सहन करते रहना ही तप कहा जाता है।

6. आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना-पढ़ाना, उनके अनुसार अपनी जीवन शैली बनाना ही स्वाध्याय है।

7. किसी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा ही राग कहलाता है।

8. बुद्धि और आत्मा समान रूप से पवित्र होने पर जीवात्मा मुक्ति को प्राप्त करता है।

9. कर्मों के तीन भाग-

क. **क्रियमाण**- जो कर्म मनुष्य द्वारा किए जा रहे हैं।

ख. **संचित**- जिन कर्मों का फल अभी मिला नहीं।

ग. **प्रारब्ध**- जिन कर्मों का फल भोगा जा रहा है।

10. जीवात्मा जो शुभाशुभ कर्म करता है उनके संस्कार चित्त पर पड़ते हैं। फिर यही संस्कार पाप-पुण्य कर्म करने का कारण बनते हैं।

11. लाभ-हानि, मान-अपमान आदि का प्रभाव जीवात्मा पर पड़ता है, चित्त पर नहीं पड़ता।

मीमांसा दर्शन

1. किसी पदार्थ के वास्तविक स्वरूप को मन में जानने की अभिलाषा को मीमांसा कहा जाता है।

2. किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करना हो तो पहले उसके विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। फिर उस ज्ञान के अनुसार श्रद्धा, निष्ठा व विश्वास से काम करते रहने से ही सफलता मिल सकती है।

3. परमात्मा जगत् की उत्पत्ति, पालन और प्रलय करता है। साथ ही जीवन को सुखी, सन्तुष्ट व ऐश्वर्यशाली बनाने के लिए वेदों का ज्ञान देता है।

4. ऋग्वेद उसे कहते हैं जिसमें छन्दोबद्ध मन्त्र होते हैं।

जिन मन्त्रों को गाया जाता है, उन्हें साम कहते हैं।

जो मन्त्र छन्द शास्त्र के अनुसार नहीं हैं और जो गाए नहीं जाते वे यजु: कहलाते हैं।

जिन मंत्रों का अर्थ सरल और स्पष्ट होता है वे अथर्ववेद कहलाते हैं।

5. यज्ञ के फल का अधिकारी तो केवल यजमान ही होता है।

6. अपनी इच्छानुसार कर्म करने को पुरुषार्थ कहा जाता है।

7. जैसे सूर्य के प्रकाश पर स्त्री-पुरुष दोनों का अधिकार है वैसे ही वेद ज्ञान पर भी स्त्री-पुरुष दोनों का अधिकार है।

8. जैसे बीज के अनुसार ही फल होता है ऐसे ही कर्म के अनुसार ही फल मिलता है।

वेदान्त दर्शन

1. वेदान्त - जिस में वेद के अन्तिम सिद्धान्तों व लक्ष्य का उल्लेख किया गया है। वेदों के स्वाध्याय से ब्रह्म के जिस परम स्वरूप को जाना जाता है उस

का उल्लेख जिस ग्रन्थ में है उसे 'वेदान्त दर्शन' कहते हैं।

2. सृष्टि में जड़-चेतन में जो विधि-विधान है वैसा ही वेदों का ज्ञान है। ऐसा इस लिए है कि दोनों का कर्त्ता-धर्त्ता एक परमेश्वर ही है। आँखों से देखा जाता है, कानों से सुना जाता है। वेदों में भी ऐसा ही बताया गया है।

3. ब्रह्म के समीप जाने से आनन्द का अनुभव होता है क्योंकि ब्रह्म आनन्द स्वरूप है।

4. मिट्टी से घड़ा बनता है। जो गुण मिट्टी में है वही गुण घड़े में है।

5. संसार में सुख-दुःख आदि विषमता और भिन्नता का कारण परमात्मा नहीं, मनुष्य के अपने अच्छे बुरे कर्म हैं।

6. शरीर की रचना पांच भूतों- अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश से हुई है। इसलिए इसे पाँच भौतिक शरीर कहते हैं। इसमें पृथ्वी का अंश अधिक है इसलिए इसे पार्थिव शरीर भी कहते हैं।

7. जब जीवात्मा मृत्यु के समय एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर में जाता है तब वह अकेला नहीं जाता, उसके साथ सूक्ष्म शरीर भी जाता है। मनुष्य शरीर में किए पुण्य-पाप के संस्कार सूक्ष्म शरीर में संचित होते हैं। वे भी पुनर्जन्म में साथ रहते हैं।

8. मोक्ष में आत्मा अपनी संकल्प शक्ति से आनन्द को प्राप्त करता है, जैसे जीवात्मा स्वप्न में शरीर और इन्द्रियों के बिना ही सुख-दुःख की अनुभूति करता है।

□□□□□

वाल्मीकि रामायण से

बाल काण्ड -

1. जैसे नदियाँ समुद्र में पहुँचती हैं उसी प्रकार श्रीराम के पास सदा सज्जनों का समागम रहता है। वे आर्य हैं, समदृष्टि हैं और सदा प्रियदर्शन हैं। (1-16)

2. श्रीराम गम्भीरता में समुद्र के समान, धैर्य में हिमालय के समान, प्रियदर्शन में चन्द्रमा जैसे, क्षमा में पृथ्वी की भान्ति, सत्यभाषण में मानो दूसरे धर्म हैं। (1-17,18)

3. श्रीराम के राज्यसिंहासन पर आरूढ़ होने पर महर्षि वाल्मीकि ने विचित्र पदों से युक्त इस सम्पूर्ण काव्य की रचना की। (2-25)

4. श्री राम काम, क्रोध और लोभ के वश में होकर भी कभी झूठ न बोलने वाले थे। (5-6)

5. राजा दशरथ (विश्वामित्र से)- आपके आगमन से मुझे वैसा ही हर्ष हुआ जैसा कि सूखी खेती को वर्षा से, अपुत्र को पुत्र होने से, खोई हुई वस्तु के मिलने से होता है। (10-12,13)

अयोध्या काण्ड

1. राजा दशरथ के राम को राजा बनाने के प्रस्ताव पर परिषद् का अनुमोदन- सबने वैसी ही प्रसन्नता प्रकट की जैसे बरसते हुए बादल को देखकर मोर प्रसन्नता प्रकट करते हैं। (2-9)

2. राजा दशरथ ने वसिष्ठ आदि महानुभावों से कहा- इस श्रेष्ठ और पवित्र चैत्र मास में, जिसमें वन पुष्पों से सुशोभित हो रहा हैं, राम के राज्याभिषेक के लिए तैयारी कीजिए। (3-4)

3. श्रीराम प्रजा को सत्य से, दीनों को दान से, गुरुओं को सेवा से और युद्ध में शत्रुओं को धनुष द्वारा जीतते थे। (11-16)

4. राजा दशरथ (कैकैयी से)- कौशल्या जो सेवा करने में दासी के समान, रहस्य में सखी के समान, धर्म कार्यों में स्त्री के सामन, हितैषियों में बहिन के समान, आग्रहपूर्वक स्वादु भोजन कराने में माता के समान, सदा प्रिय

कामना करने वाली, सदा प्रिय बोलने वाली, जब समय समय पर उपस्थित होती रही तब तब हे देवि! सत्कार करने योग्य होने पर भी मैंने तेरे कारण उसका सत्कार नहीं किया। (11-39, 40)

5. राजा दशरथ (कैकेयी से)- तेरे प्रति मैंने जो सद्व्यवहार किया था, उसका आज मुझे उसी प्रकार पश्चाताप हो रहा है जिस प्रकार स्वादिष्ट किन्तु कुपथ्य भोजन करके रोगी को पश्चाताप होता है। (11-41)

6. राजा दशरथ (कैकेयी से)- श्रेष्ठ लोग (आर्य) मुझे अनार्य और पुत्र-विक्रेता कहकर उसी प्रकार धिक्कारेंगे जिस प्रकार शराब पीने वाले ब्राह्मण को लोग गली-कूचों में धिक्कारते हैं। (11-42)

7. कैकेयी द्वारा प्रेरित चाबुक से आहत घोड़े की भान्ति राम वन जाने के लिए शीघ्रता करने लगे। (16-11)

8. सदा माता को प्रसन्न करने वाले पुत्र को चिरकाल पश्चात् आया देखकर माता कौशल्या प्रसन्न होकर राम की ओर इस प्रकार दौड़ी जिस प्रकार घोड़ी अपने बछड़े को देख कर उसकी ओर दौड़ती है। (17-2)

9. राम के वचनों को सुनकर देवी कौशल्या कुल्हाड़े से कटी साल वृक्ष की डाली की भान्ति एक दम भूमि पर गिर पड़ी- मानो आकाश से कोई तारा गिर गया हो। (17-12)

10. वन जाने की बात पर लक्ष्मण (राम से)- जिस प्रकार सूर्य अपने प्रकाश से अन्धकार को मिटा देता है उसी प्रकार मैं अपने पराक्रम से आपके सारे कष्टों को अभी नष्ट कर देता हूँ। (18-15)

11. वन जाने की बात पर राम (लक्ष्मण से)- लोक में धर्म ही परम पुरुषार्थ है। धर्म से ही सत्य प्रतिष्ठित है। (19-6)

12. राम लक्ष्मण से- मेरे वनवास और पिता प्रदत्त राज्य के छिन जाने में भाग्य को ही कारण समझो। इसमें किसी का कुछ वश नहीं। यदि भाग्य मेरे विपरीत न होता तो मुझे पीड़ा देने हेतु कैकेयी की बुद्धि ऐसी न होती। (20-4, 5)

13. राम लक्ष्मण से- दैव (भाग्य) से कौन युद्ध कर सकता है क्योंकि दैव का प्रत्यक्ष कर्मफल-भोग के रूप में ही होता है और किसी रूप में नहीं। (20-6)

14. राम लक्ष्मण से- जिस कार्य को करने का कभी विचार भी न किया हो और वह अकस्मात् हो जाए तथा प्रयत्न द्वारा आरम्भ किया हुआ कार्य अनायास रुक जाए- इसी को दैव कहते हैं। (20-9)

15. राम कौशल्या से- पति का परित्याग करना स्त्री के लिए सबसे बड़ी क्रूरता है। (21-9)

16. राम सीता से-देखना तुम भरत के सामने मेरी प्रशंसा कभी मत करना क्योंकि ऐश्वर्यसम्पन्न पुरुष अन्य की प्रशंसा सहन नहीं कर सकता। (22-8)

17. राम सीता से- मैं तुम्हें उसी प्रकार नहीं छोड़ सकता जैसे चरित्रवान मनुष्य अपनी कीर्ति को नहीं छोड़ सकता। (25-27)

18. दशरथ राम से- हे राम! कैकेयी ने वरदान के द्वारा मुझे धोखा दिया है। अतः तुम मुझे बन्दी बनाकर बलपूर्वक अयोध्या का राजा बनो। (28-22)

19. राम दशरथ से- राजन्! आप अनेक वर्ष तक पृथ्वी का पालन करें। मैं आपको झूठा नहीं बनाना चाहता। मैं अवश्य वन में वास करूँगा। (28-24)

20. दशरथ राम से- हे वत्स! मैं सत्य की शपथ लेकर कहता हूँ कि तुम्हारा वन जाना मुझे बिल्कुल भी पसन्द नहीं है। परन्तु क्या करूँ मैं भस्म में छिपी हुई अग्नि की भान्ति भयंकर एवं कुटिल अभिप्राय वाली कैकेयी की चाल में फंस गया हूँ। (28-31)

21. सुमन्त्र कैकेयी से- कैकेयी! तू अपने पति का तिरस्कार मत कर। स्त्रियों के लिए पति की इच्छा के अनुसार चलना करोड़ों पुत्रों के स्नेह से भी बढ़कर है। (29-3)

22. सुमन्त्र कैकेयी से- नीम से कभी मधु नहीं चूता- यह लोकोक्ति ठीक ही है। यही कारण है जैसी तेरी माता थी वैसी ही तू भी निकली। (29-8)

23. सुमन्त्र कैकेयी से- यह लोक प्रवाद मुझे ठीक ही प्रतीत होता है कि पुत्र पिता के स्वभाव वाले और पुत्रियाँ माता के स्वभाव वाली होती हैं। (29-9)

24. दशरथ का विलाप- प्रतीत होता है कि मैंने पूर्व जन्म में बहुत सी गायों को उनके बछड़ों से अलग कर दिया था अथवा बहुत से प्राणियों का वध

किया था, इसीलिए मेरे ऊपर यह दु:ख आ पड़ा है। (32-10)

25. कौशल्या सीता से- जो स्त्रियां पति द्वारा सदैव संस्कृत और सम्मानित होने पर भी विपत्तिकाल में पति का आदर सम्मान नहीं करतीं वे स्त्रियां कुलटा कहलाती हैं। (32-21)

26. कौशल्या सीता से- कुलटा स्त्रियां असत्य बोलने वाली तथा विकृत विचार वाली होती हैं। उनके मन की बात बड़ी कठिनाई से जानी जाती है। वे हृदयशून्य होती हैं। उनके संकल्प पापपूर्ण होते हैं। वे क्षणमात्र में अपने पतियों को त्याग देती हैं। (32-23)

27. कौशल्या सीता से- उत्तम कुल, किया हुआ उपकार, धर्म-विद्या, वस्त्राभूषणों का दान और वैवाहिक बन्धन- कोई भी बात इन कुलटा स्त्रियों के मन को वश में नहीं कर सकती क्योंकि वे चंचलहृदय होती हैं। (32-24)

28. कौशल्या सीता से- मेरे पुत्र राम का कभी अपमान मत करना। वह चाहे धनी है या निर्धन, तेरे लिए तो देवता के समान पूज्य एवं मान्य है। (32-26)

29. सीता कौशल्या से- हे आर्ये! आप असती स्त्रियों से मेरी तुलना न करें। जैसे चन्द्रमा की ज्योत्सना चन्द्रमा से पृथक् नहीं हो सकती, उसी प्रकार मैं भी धर्म से कभी विचलित नहीं हो सकती। (32-29)

30. सीता कौशल्या से- जैसे बिना तार के वीणा नहीं बजती, बिना पहिए का रथ नहीं चलता, उसी प्रकार बिना पति के स्त्री भी सुख नहीं पाती चाहे वह सौ पुत्रों वाली ही क्यों न हो। (32-30)

31. सीता कौशल्या से- पिता, माता तथा पुत्र- ये सब परिमित सुख के देने वाले हैं, परन्तु पति अमित सुख का देने वाला है। अत: ऐसी कौन अभागी स्त्री होगी जो पति का आदर सम्मान न करेगी। (32-31)

32. जब राम वन को जाने लगे- अयोध्या के सभी बालक और बूढ़े व्याकुल हो राम के रथ के पीछे वैसे ही दौड़ने लगे जैसे धूप से सन्तप्त व्यक्ति पानी की ओर दौड़ता है। (33-14)

33. जब राम वन को जाने लगे, वे लोग राम को उत्कण्ठापूर्वक उसी प्रकार देखते थे, जैसे प्यासा पानी को देखता है। (35-4)

34. राम के वन चले जाने पर चन्द्रमा रहित आकाश अथवा जलविहीन समुद्र

की भान्ति आनन्दहीन अयोध्या को देखकर वे लोग खिन्न हो गए। (37-12)

35. महाराज दशरथ मृत्यु शैया पर पड़े हुए कौशल्या से बोले- हे कल्याणी! मनुष्य अच्छा या बुरा जैसा भी कर्म करता है, उस कर्म का फल कर्ता को अवश्य मिलता है। (48-3)

36. दशरथ कौशल्या से- (श्रवण कुमार वध को याद करके)- हे देवि! स्वयं किया हुआ मेरा पाप दु:ख के रूप में मुझे इस प्रकार प्राप्त हो रहा है जिस प्रकार अज्ञानवश विष खाकर बालक कष्ट उठाता है। (48-7)

37. अनेक कठोर वाक्यों द्वारा कौशल्या ने जब निष्पाप भरत को फटकारा तब भरत को ऐसा दु:ख हुआ जैसा घाव में सुई चुभोने से होता है। (58-13)

38. वन में राम भरत से- जिस प्रकार स्त्रियां परस्त्रीगामी पतित पुरुष का तिरस्कार करती हैं, उसी प्रकार कहीं अधिक कर लेने से प्रजा तुम्हारा अनादर तो नहीं करती। (70-18)

39. वन में राम भरत से- भोजन और वेतन ठीक समय पर न मिलने से नौकर लोग क्रुद्ध होते हैं और स्वामी की निन्दा करते हैं। (70-23)

40. वन में राम का भरत को उपदेश- हे भरत! अपने सुख-दु:ख भोग में मनुष्य स्वतन्त्र नहीं, परतन्त्र है। कर्मों का यथायोग्य फल देने के लिए परमात्मा उसे इधर-से-उधर खेंचता हुआ बहुत नाच नचाया करता है। (74-8)

41. राम का उपदेश- जैसे महासमुद्र में लहरों के द्वारा एक काठ दूसरे काठ के साथ मिल जाता है और फिर समय पाकर अलग-अलग हो जाते हैं, वैसे ही स्त्री, पुत्र, भाई-बन्धु, धन-सम्पत्ति समय से प्राप्त होते हैं। फिर इनका वियोग भी हो जाता है क्योंकि इनका वियोग होना निश्चित है। (74-19,20)

42. राम का उपदेश- ऋषि और विद्वान लोग सत्य को ही उत्कृष्ट मानते हैं क्योंकि सत्यवादी पुरुष ही संसार में अक्षय सुख को पाता है। (77-19)

43. राम का उपदेश- मिथ्यावादी पुरुष से लोग वैसे ही डरते हैं जैसे सांप से। (77-20)

अरण्य काण्ड-

44. वन में राम का खर को उपदेश- जैसे ऋतु के आने पर वृक्ष स्वयं फूल देने लगते हैं, ठीक उसी प्रकार समय आने पर जीवों को उनके किए पापकर्मों का घोर फल अवश्य प्राप्त होता है। (19-8)

45. सीताहरण के पश्चात् श्रीराम सीता के वियोग में विलाप करते हुए कहते हैं- हे लक्ष्मण! मैं समझता हूँ इस सारी भूमि पर मेरे समान बुरे काम करने वाला पापी पुरुष और कोई नहीं है, क्योंकि एक के पश्चात् एक दु:खों की परम्परा मेरे हृदय और मन को चीर रही है। पूर्व जन्म में निश्चय ही मैंने एक के पश्चात् एक बहुत से पाप किए हैं। उन्हीं पापों का फल आज मुझे मिल रहा है। राज्य हाथ से छिन गया, अपने लोगों से वियोग हो गया, पिता जी परलोक सिधार गए, माता जी से बिछोड़ा हो गया। इन घटनाओं को याद करके मेरा हृदय शोक से भर जाता है। हे लक्ष्मण, ये सारे दु:ख इस रमणीक वन में आने पर शान्त हो गए थे। परन्तु आज सीता के वियोग से वे सभी भूले हुए दु:ख उसी प्रकार फिर से ताजा हो गए हैं जैसे लकड़ी डालने से आग जल उठती है। (35-17, 18, 19, 20)

□□□□□

महत्त्वपूर्ण श्लोक

1. राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः।
राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः।। (चाणक्य नीति, 13-7)

अर्थ- राजा के धार्मिक होने पर प्रजा भी धार्मिक होती है, पापी होने से पापी, सम होने पर सम- जैसा राजा वैसी प्रजा भी हो जाती है।

2. यथा धेनुसहस्त्रेषु वत्सो गच्छति मातरम्।
तथा यच्च कृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति।। (चाणक्य नीति 13-14)

अर्थ- जैसे हजारों गौओं की विद्यमानता में बछड़ा अपनी माता के पास ही जाता है। वैसे ही जो कर्म किया जाता है वह कर्ता को ही प्राप्त होता है।

3. न निर्मितो केन न दृष्टपूर्वो न श्रूयते हेममयो कुरंगः।
तथापि तृष्णा रघुनन्दनस्य विनाशकाले विपरीत बुद्धिः।।
(चाणक्य नीति 16-5)

अर्थ- सोने का मृग न पहले किसी ने बनाया है, न किसी ने देखा और न ही किसी ने सुना है। फिर भी रामचन्द्र जी उस पर ललचा गए। विनाश के समय

बुद्धि उलटी हो जाती है।

4. पुस्तकेषु च या विद्या परहस्तेषु यद् धनम्।
उत्पन्नेषु च कार्येषु न सा विद्या न तद् धनम्।। (चाणक्य नीति 16-20)

अर्थ- जो विद्या पुस्तकों में ही है और जो धन दूसरों के हाथ में है, काम पड़ने पर न वह विद्या और न ही वह धन काम आता है।

5. कृते प्रतिकृतिं कुर्यात् हिंसने प्रतिहिंसनम्।
तत्र दोषो न पतति दुष्टे दुष्टं समाचरेत्।। (चाणक्य नीति 17-2)

अर्थ- जो जैसा करे उसके साथ वैसा करना चाहिए, मारने पर मारना चाहिए, इसमें दोष नहीं होता। दुष्ट के साथ दुष्टता का आचरण करे।

6. अधः पश्यसि किं बाले पतितं तव किं भुवि।
रे रे मूर्ख न जानासि गतं तारुण्य मौक्तिकम्।। (चाणक्य नीति 17-20)

अर्थ- हे बाले! नीचे को क्या देखती हो, तुम्हारा पृथ्वी पर क्या गिर गया है। स्त्री बोली-रे मूर्ख, तू नहीं जानता कि मेरा यौवन रूप मोती चला गया है।

7. नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। (गीता 4-38)

अर्थ- इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र और कुछ भी नहीं है।

8. ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देषेऽर्जुन तिष्ठति। (गीता 18-61)

अर्थ- हे अर्जुन! ईश्वर सब प्राणियों के हृदय में निवास करता है।

9. जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।। (गीता 2-27)

अर्थ- जो जन्म लेता है उसकी मृत्यु निश्चित है और जो मर चुका है उसका जन्म लेना निश्चित है।

10. वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।। गीता 2.22

अर्थ- जैसे कोई व्यक्ति फटे पुराने कपड़ों को उतार देता है और दूसरे नए कपड़े पहन लेता है, उसी प्रकार यह आत्मा जीर्ण शीर्ण शरीर को त्याग कर अन्य नए शरीर को प्राप्त कर लेती है।

11. नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।। (गीता 2.23)

अर्थ- शस्त्र इस आत्मा को काट नहीं सकते, आग इसे जला नहीं सकती, पानी इसे गला नहीं सकता और वायु इसे सुखा नहीं सकती।

12. यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।। (गीता 3-21)
अर्थ- समाज में प्रतिष्ठित लोग जैसा आचरण करते हैं आम लोग भी वैसा ही आचरण करते हैं। वे जिसे सही कहते हैं लोग उसे स्वीकार करते हैं।

13. न देवा दण्डमादाय रक्षन्ति पशुपालवत्।
यं तु रक्षितुमिच्छन्ति बुद्ध्या संविभजन्ति तम्।। (विदुरनीति 3-40)
अर्थ- देव (भगवान) ग्वाले के समान हाथ में डण्डा लेकर रक्षा नहीं करते। वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं उसको अच्छी बुद्धि दे देते हैं।

14. नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति।
न तत्सत्यं यच्छलेनाभ्युपेतम्।। (विदुरनीति 3-58 अंश)
अर्थ- जहां सत्य नहीं वह धर्म नहीं, जिसमें छल हो वह सत्य नहीं।

15. सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः।। (विदुरनीति 5-15)
अर्थ- हे राजन्। संसार में प्यारी, चिकनी-चुपड़ी बातें करने वाले आदमी तो बड़ी सहजता से पाए जा सकते हैं। परन्तु प्रिय न लगने वाले हितकारी वचनों को कहने वाले और ऐसे वचनों को सुनने वाले लोग मुश्किल से मिलते हैं।

16. निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्,
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।

(भर्तृहरि, नीतिशतक-85)

अर्थ- नीतिवान् लोग चाहे निन्दा करें या प्रशंसा करें, धन आए या जाए, मृत्यु अभी आ जाए या चिरकाल के बाद आए, धैर्यवान लोग न्याय के मार्ग से पीछे नहीं हटते।

17. यस्तर्केणानुसन्धते स धर्म वेद न इतरः। (मनुस्मृति 12-106)
अर्थ- जो व्यक्ति तर्क के द्वारा खोज करता है वही धर्म के तत्त्व को समझ पाता है और कोई नहीं।

18. बुद्धिपूर्वा वाक्कृतिर्वेद। (वैशेषिक दर्शन)
अर्थ- वेद का प्रत्येक वाक्य समझदारी से बना है।

19. अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्मफलं नरैः।

प्रतिकारैर्विना नैव प्रतिकारे कृतं सति। (शुक्रनीति, 1. 88)

अर्थ- मनुष्यों को अपने किए कर्म का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है। कोई कितना ही कर्मकाण्ड करे कुछ भी होने वाला नहीं, बिना भोगे छुटकारा नहीं।

20. नायं परस्य सुकृतं दुष्कृतं चापि सेवते।

करोति यादृशं कर्म तादृशं प्रतिपद्यते।। (महाभारत, शान्तिपर्व)

अर्थ- यह जीव दूसरों के पुण्य या पाप कर्मो के फल को नहीं भोगता। जैसा कर्म स्वयं करता है वैसा ही फल पाता है।

21. श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम्।

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।। (महाभारत)

अर्थ- धर्म का सार सुनो और सुनकर उसी के अनुसार आचरण करो। जो आचरण हमें अपने लिए पसन्द नहीं वह आचरण दूसरों के साथ मत करो।

22. सत्यधर्मविहीनेन न संदध्यात् कथञ्चन।

सुसन्धितोऽपि असाधुत्वादचिराद्याति विक्रियाम्।।

(पंचतन्त्र, काकोलूकीयम् 24)

अर्थ- सत्य धर्म से रहित व्यक्ति से कभी सन्धि या समझौता नहीं करना चाहिए। भलीभांति सन्धि कर लेने के बाद भी वह दुष्टता के कारण शीघ्र ही बिगड़ जाता है और समझौते से मुकर जाता है।

23. मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः। (उपनिषद्)

अर्थ- मन ही मनुष्यों के बन्धन और मुक्ति का कारण है अर्थात् सारा दुःख-सुख मन के कारण ही होता है।

24. न हि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम्।

न हि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात्सत्यं समाचरेत्।।

अर्थ- सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं, झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं। सत्य से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं। इसलिए सत्य का आचरण करें।

25. शठे शाठ्यम् समाचरेत्, हिंसके प्रतिहिंसनम्।

अर्थ- धोखा देने वाले के साथ धोखा ही करे, मारने वाले को मारे।

□□□□□

महत्त्वपूर्ण बातें-1

1. अवतारवाद : महाभारत में श्रीकृष्ण कहते हैं-

अहं हि तत् करिष्यामि परमपुरुषकारतः।
दैवं तु न मया शक्यं कर्म कर्त्तुं कथञ्चन।।

अर्थ- मैं एक श्रेष्ठ पुरुष की भान्ति अपने पुरुषार्थ से तो कुछ कर सकता हूँ, किन्तु दैवी (ईश्वरीय) विधान में हस्तक्षेप करना मेरे सामर्थ्य से बाहर है।

2. दूसरे गोत्र में या कई गोत्र बचाकर शादी करना अथवा अन्तर्जातीय या अन्तर्धार्मिक विवाह रचाना अपेक्षाकृत अधिकाधिक वैज्ञानिक है। इससे नई संतति अथवा आगे वाली पीढ़ियों में कई अतिरिक्त गुण सहज ही विकसित हो जाते हैं। जो कौम जितनी अधिक हाईब्रिड होगी वह उतनी अधिक उन्नत होगी।

3. धर्म- महाभारत के यशस्वी रचयिता महर्षि वेदव्यास जी तो बहुत संक्षेप में धर्म का सार बताते हैं-'**आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्**' अर्थात् जो हमें स्वयं को बुरा लगे वह व्यवहार दूसरों के साथ न करो, यही धर्म है।

4. एक पूर्व स्वतन्त्रता सेनानी- आजादी की लड़ाई अंग्रेजों के खिलाफनहीं लड़ी गई थी, अपितु खुशहाली के लिए लड़ी गई थी। अब खुशहाली तो बदमाशों के घर या भ्रष्ट नेताओं और भ्रष्ट अफसरों के घरों में है।

5. योगदर्शन में- आततायिनं आयान्तं हन्यादेवाविचारयन्।

अर्थ- आक्रमण करने के लिए आते हुए आततायी को बिना विचार किए ही मार डालो।

6. यक्ष-धर्मराज संवाद- तप का लक्षण क्या है? -कर्त्तव्य पालन।

7. वर्तमान वैज्ञानिक युग का सबसे बड़ा दोष है पशुओं की अवहेलना। यन्त्रों के आधिक्य ने पशुओं के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ा।

8. जो समाज इन्द्रप्रस्थ की पटरानी, महाराज द्रुपद की पुत्री और पांडवों की पत्नी द्रौपदी के वस्त्रहरण पर चुप रह गया हो वो समाज भला किसी साधारण नारी के मान-सम्मान की क्या रक्षा करेगा।

9. ईमानदारी आपका व्यक्तिगत चुनाव है, कोई भी आपको बेईमान नहीं बना सकता, लेकिन आप खुद बनते हैं। एक बार तीन पादरी दान को लेकर परेशान स्थिति में थे। पहला पादरी कहता है कि उसने सारा धन एक थैले में इकट्ठा कर दिया है। वह जमीन पर एक चक्र बनाता है और फिर धन को हवा में उछाल देता है। जो धन उस चक्र में गिरता है वह उसे संस्थान को दे देता है और जो धन चक्र के बाहर गिरता है उसे अपने लिए रख लेता है। दूसरा पादरी ठीक उसके विपरीत करता है। वह भी धन को इकट्ठा करता है और जमीन पर चक्र बनाता है और फिर धन को हवा में उछाल देता है। वह कहता है जो धन चक्र में गिरता है उसका उपयोग मैं खुद करता हूँ और जो बाहर गिरता है उसे संस्थान को दे देता हूँ। तीसरा पादरी कहता है कि ये दोनों गॉड जी को बेवकूफ बना रहे हैं। मैं अपना सारा धन हवा में उछाल देता हूँ और गॉड जी से कह देता हूँ कि वे जितना चाहे रख सकते हैं और जो कुछ जमीन पर गिर जाता है, उसे मैं अपने लिए रख लेता हूँ।

10. तलाक की शर्त-

पति (पत्नी से)- मैं तुम्हें तलाक देना चाहता हूँ।

पत्नी- अगर आप मुझे तलाक देना चाहते हैं तो मेरी सारी चीजें वापिस करो जो मैं घर से लाई थी।

पति- तुम अपनी सारी चीजें वापिस ले सकती हो।

पत्नी- मैं घर से जवानी लाई थी, सुन्दरता लाई थी, अपने घर से अपनी इज्जत लाई थी। ये तीनों चीजें मेरी आपने लूट ली है। ये तीनों चीजें वापिस करो तभी तलाक हो सकता है।

11. चाणक्य नीति-

वर्तमान के निर्धारण में अतीत न भूलें।

दुष्ट का अचानक स्वभाव परिवर्तन अनिष्ट (बुरा) का सूचक है।

कुपात्र से वार्तालाप हर हालत में त्याग देना ही उचित है।

12. संस्कार- पहले से विद्यमान दुर्गुणों को हटाकर उनके स्थान पर सद्गुणों को ग्रहण कर लेने का नाम ही संस्कार है। (डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार)

13. हिरोशिमा पर परमाणु बम 6 अगस्त 1945 को गिराया गया। बम गिराने से पहले हैरी ट्रुमन, स्टालिन और ब्रिटेन के नए प्रधानमंत्री क्लेमेंट एटली ने

संयुक्त रूप से जापान को चेतावनी दी थी कि या तो वह संरडर करे या फिर हमले का सामना करने को तैयार रहे।

14. नारी जाति- नारी को बाईबल में पत्थर की तरह जड़, कुरान में पुरुषों की खेती कहा गया है। आदि शंकराचार्य के शब्दों में 'विश्वास के सर्वथा अयोग्य और नरक का द्वार' तुलसीदास के शब्दों में 'अवगुणों की खान' नारी को कहा गया है। महर्षि मनु ने कहा है कि जिस घर में नारी का सम्मान होता है उस घर में सब सुख-समृद्धि रहती है।

15. जैसे सूर्य और चन्द्रमा का प्रकाश खिड़कियों और द्वारों से प्रवेश कर घर के भीतर प्रकाश करता है वैसे विद्वानों का उपदेश कानों में प्रविष्ट होकर भीतर हृदय में प्रकाश करता है। (यजुर्वेद 21-49)

16. जो विद्वान् चन्द्रमा के समान शांत स्वभाव और सूर्य के समान विद्या के प्रकाश करने को स्वीकार करके संसार में समस्त विद्याओं को फैलाता है वही आप्त अर्थात् अति उत्तम विद्वान है। (ऋग्वेद 1-105-18)

17. मूर्तिपूजा ने हिन्दुओं को कायर बना दिया। जब कोई महमूद गजनवी जैसा इनकी मूर्तियों को तोड़ता है तो ये पुजारी हाय-हाय कर रोते हैं, मूर्तियों के सहारे बैठकर आततायी का प्रतिरोध भी नहीं करते।

18. मिमीहि श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः। (ऋग्वेद 1-38-14)
अर्थ- हे विद्वान् मनुष्य! तू श्लोक अर्थात् मन्त्र को मुँह में भर ले और बादल की तरह (बरस कर) सब जगह फैला दे। अर्थात् वेद ज्ञान को प्राप्त करके उसे औरों तक पहुँचा।

19. हिन्दू आजकल प्रायः जिन धर्म ग्रन्थों को पढ़ते हैं और जिन मान्य पुरुषों के विचार वे सुनते हैं, वहां से उन्हें क्षात्रधर्म, राष्ट्रधर्म, सामाजिक धर्म तथा राजधर्म के विचार नहीं मिलते।

20. प्रतिभा- आपमें प्रतिभा है पर समाज या राष्ट्र उससे लाभान्वित नहीं हो रहा तो उसका क्या लाभ। सूर्य बादलों से ढका है और प्रकाश व गर्मी जमीन पर न पहुँचे तो उसका क्या लाभ।

प्रतिभा का साधारणीकरण हो रहा है। हीरों को काँच के टुकड़ों के ढेर में मिलाकर उन जैसा बताया जा रहा है। हीरों को दरकिनार कर काँच के टुकड़ों को सजाया जा रहा है।

21. जैसे अति प्यासे मनुष्य को जल की इच्छा रहती है वैसे ही पति पत्नी पूर्ण प्रीति से एक दूसरे की इच्छा करें। (अथर्ववेद 6-139-4)

जो मनुष्य विद्याओं को स्मरण रखकर उपयोग करते हैं वे ही संसार में प्रिय होते हैं।

विद्वान् मनुष्य दूर देशों से विद्या और धन प्राप्त करके कुटुम्ब आदि का पालन करे।

22. महात्मा ज्योतिबा फुले- इनका जन्म 28 अप्रैल 1827 में पूना के एक पिछड़े क्षेत्र में गोबिन्दराव के घर हुआ। इनके पिता मालाकार थे। वे पेशवाओं के घर में फूलमाला ले जाने का व्यवसाय करते थे। अत: इनके परिवार को फुले का नाम मिला।

ज्योतिबा फूले ने समाज में फैली कुरीतियों, पाखण्ड, ढकोसलों व अस्पृश्यता जैसी बुराइयों का घोर विरोध किया और मिथ्या आडम्बरों व पाखण्डों पर आश्रित लोगों के विरुद्ध विद्रोह का बिगुल बजा दिया।

इन्होंने बाल विवाह का विरोध किया, विधवा विवाह का समर्थन किया तथा स्त्री शिक्षा के लिए स्कूल खोले- एक 1848 में और दूसरा 1851 में। पाखण्डियों ने इनका विरोध किया। ब्रिटिश सरकार ने 200 रुपए मूल्य का एक शॉल देकर फुले को सम्मानित किया।

1873 में इन्होंने 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की तथा ब्राह्मण विरोधी होने के कारण यह व्यवस्था दी कि विवाह ब्राह्मण पुरोहित के बिना ही सम्पन्न किए जाएं। वर-वधू गुरुजनों के सामने वैवाहिक दायित्वों को पूरा करने की प्रतिज्ञा लें और उनका आशीर्वाद ग्रहण करें। यही विवाह की विधि समझी जाए। कट्टरपंथी लोगों ने इसका विरोध किया और ऐसे विवाह को अवैध होने की घोषणा की। मामला मुम्बई हाईकोर्ट में गया और कोर्ट ने निम्न जातियों के ऐसे विवाह को वैध घोषित किया।

28 नवम्बर 1890 को उनका देहान्त हो गया।

23. RSS और आर्यसमाज- 1944 में सिन्ध प्रान्त में मुस्लिम लीगी मन्त्रीमण्डल ने सत्यार्थ प्रकाश के 14वें समुल्लास पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। इस पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने तथा हिन्दू महासभा ने तीव्र आन्दोलन चलाया। वीर सावरकर ने वायसराय से मिलकर सत्यार्थ प्रकाश से प्रतिबन्ध

दूर करने की पुरजोर मांग उठाई। परन्तु RSS मौन तथा तटस्थ रहा। RSS के सर संघचालक इस समय गुरु गोलवरकर जी थी। 1957 के पंजाब हिन्दी सत्याग्रह में भी RSS के शीर्ष नेता (अधिकारी) तटस्थ रहे।

24. महाजनो येन गतः स पन्थाः।। अर्थात् सत्पुरुष जिस मार्ग से चले हैं उसी मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

पंचतन्त्र में पण्डित विष्णु शर्मा लिखते हैं – 'तातस्य कूप इति ब्रुवाणाः क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति।'

हमारे पूर्वज इसी कूएं का पानी पीते रहे हैं यह कहकर कायर पुरुष उसी खारे पानी को पीते रहते हैं। वीर पुरुष इसके विपरीत जल के नए मीठे स्रोत ढूंढकर जल प्राप्त कर लेते हैं।

लीक-लीक गाड़ी चले, लीक-लीक चले कपूत।
लीक छोड़ तीनों चलें, शायर, सिंह, सपूत।।

25. यथायोग्य व्यवहार- महाकवि भारवि ने अपने महाकाव्य 'किराता र्जुनीयम्' में द्रौपदी या भीम के मुख से कहलवाया है कि वे मूर्ख लोग जो दुष्टों और धोखेबाजों के साथ वैसा ही व्यवहार नहीं करते, पराजय और तिरस्कार को प्राप्त होते हैं।

26. मार्टिन लूथर- शान्ति और न्याय को अलग-अलग नहीं किया जा सकता। कोई लड़ाई-झगड़ा न होना शान्ति का लक्षण नहीं। न्याय की रक्षा ही शान्ति का लक्षण है। इसलिए झगड़ों के मूल कारणों का पता लगाकर उसको समाप्त करने को प्रयास करें। यही शान्ति स्थापना का ठीक उपाय है। जब दुनिया भर में दुःख फैला हुआ है, अन्याय, अत्याचार की वृद्धि हो रही है, तब अपने लिए शान्ति चाहना अनैतिकता है। अन्याय को मिटाने के लिए प्रयास करना सबका नैतिक दायित्व है। इसी से शान्ति सम्भव है। इस बात की उपेक्षा करना पाप है।

27. एकता-एकता का ढोंग करने से एकता स्थापित न होगी। सच्ची एकता तभी स्थापित होगी जब मन मिले हुए होंगे।

□□□□□

महत्त्वपूर्ण बातें-2

1. भारतीय चमड़ा- कुछ वर्ष पहले सेवी नाम की पत्रिका में किसी विदेशी महिला ने लिखा था कि विदेशी लोग भारत के चमड़े को खरीदना इसलिए पसन्द नहीं करते, क्योंकि यहां पर पशुओं को बहुत ही कष्टदायक तरीके से मारा जाता है। केरल में तो गौओं को उनके सिर पर हथौड़ों से वार करके मारा जाता है।

2. न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।

अर्थ- इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र और कुछ भी नहीं है। अज्ञान के समान मनुष्य का कोई दूसरा बड़ा शत्रु नहीं है। अज्ञानी रहने से तो जन्म न लेना अच्छा है क्योंकि अज्ञान ही समस्त विपत्तियों का कारण है।

3. स्वतन्त्रता- वास्तविकता तो यह है कि हम भारतवासियों-हिन्दुओं, वैदिक धर्मियों या आर्यसमाजियों को तो स्वतन्त्रता मिली ही नहीं। स्वतन्त्रता मिली केवल मुसलमानों को जो हिन्दुस्तान के एक तिहायी भाग पर पाकिस्तान और बंगलादेश के नाम से निरंकुश इस्लामी शासन बना बैठे और शेष रहे भारत में उन्हें विशेषाधिकारों से इस्लामीकरण का अधिकार मिल गया है।

4. गाय की पुकार- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त-

दाँतों तले तृण दाबकर हैं दीन गायें कह रहीं
हम पशु तथा तुम हो मनुज, पर योग्य क्या तुमको यही?
हमने तुम्हें माँ की तरह है दूध पीने को दिया।
देकर कसाई को हमें तुमने हमारा वध किया।।
क्या वश हमारा है भला, हम दीन हैं, बलहीन हैं,
मारो कि पालो कुछ करो, हम सदैव अधीन हैं।।
प्रभु के यहाँ से भी कदाचित् आज हम असहाय हैं,
इससे अधिक अब क्या कहें, हा! हम तुम्हारी गाय हैं।।
जारी रहा यदि यही क्रम यहाँ यों ही हमारे नाश का।
तो अस्त समझो सूर्य भारत भाग्य के आकाश का।
जो तनिक हरियाली रही वह भी नहीं रह पाएगी।
यह स्वर्णभूमि कभी मरघट ही बन जाएगी।।

5. मूर्त्तिपूजा- चीनी यात्री फाह्यान ने सन् 400 में भारत की यात्रा की। उसका कहना है कि उस समय काबुल में बौद्ध धर्म का बहुत विस्तार था और वहां बौद्धों के 500 विहार थे। वह सर्वत्र घूमता हुआ जब पटना पहुँचा तो उसने अपनी यात्रा के मध्य में पहली बार बुद्ध की मूर्ति को देखा। इस यात्रा विवरण में मात्र बौद्धों के संघों व मूर्तियों की चर्चा है, हिन्दुओं के मंदिरों या मूर्तियों की नहीं। उसके 240 वर्ष बाद दूसरे चीनी यात्री ह्वेनसांग ने सन 640 में बौद्धों से परिपूर्ण जलालाबाद में हिन्दुओं के 5 शिवालय देखे जिनमें 100 पुजारी थे। कन्धार और पेशावर में हिन्दुओं के 100 मन्दिर देखे।

मूर्तिपूजा में हिन्दुओं ने बौद्धों का अनुकरण किया। यह ईश्वर पूजा नहीं है, व्यक्ति पूजा है। जिसका वेदादि साहित्य में कोई चिह्न नहीं है। यह भी सिद्ध है कि मूर्तिपूजा 1500 वर्ष पहले आरम्भ हुई है।

जब परमात्मा सब जगह है। वह मूर्ति में है, वैसे ही मन्दिर के कूड़ा कर्कट में भी है। मूर्ति पूजनीय है तो कूड़ा कर्कट भी पूजनीय है। उसे मन्दिर से बाहर क्यों फेंका जाता है।

भगवान मन्दिर में स्थित मूर्ति में है वह वहीं याद आएगा, और जगह नहीं। इस प्रकार मूर्तिपूजक मन्दिर में बुरे काम से डरेगा, बाहर नहीं।

आस्तिक, नास्तिक- इसलिए केवल मूर्ति में भगवान को मानने वाला नास्तिक है तथा ईश्वर को सर्वत्र मानने वाला आस्तिक है।

6. आर्यसमाज का कार्य : रामधारी सिंह दिनकर

'आर्यसमाज के जन्म के समय हिन्दू कोरा फुसफुसिया जीव था। उसके मेरुदंड की हड्डी थी ही नहीं। चाहे कोई उसे गाली दे या उसकी हंसी उड़ाए, उसके देवताओं की भर्त्सना करे या उसके धर्म पर कीचड़ उछाले, जिसे वह सदियों से मानता आ रहा है, फिर भी इन सारे अपमानों के सामने दांत निपोर कर रह जाता था। लोगों को यह उचित शंका हो सकती थी कि यह आदमी भी है या नहीं, अथवा वह प्रतिपक्षी की ओर घूर सकता है या नहीं। किन्तु आर्य समाज के उदय के बाद, अविचल उदासीनता की यह मनोवृत्ति विदा हो गई। हिन्दुओं का धर्म एक बार फिर जगमगा उठा है। आज का हिन्दू अपने धर्म की निंदा सुनकर चुप नहीं रह सकता। जरूरत हुई तो धर्म रक्षार्थ वह अपने प्राण भी दे सकता है।' (राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के

चार अध्याय पृष्ठ संख्या 567)

7. नालन्दा विश्वविद्यालय में बौद्ध विद्यार्थी पढ़ते तथा पूजा-पाठ करते थे। उनमें क्षत्रियत्व न था। मुसलमानों ने उन्हें लाखों की गिनती में काट डाला।

8. सिख हिन्दू हैं?- सन् 1884 में भाई काहन सिंह नाभा ने 'हम हिन्दू नहीं' नामक पुस्तक लिखकर सिखों को हिन्दुओं से अगल दिखाने की कोशिश की थी। राजेन्द्र सिंह निराला ने 'हम हिन्दू हैं' पुस्तक लिखकर काहन सिंह की बात को गलत सिद्ध करने का प्रयास किया है। उन्होंने लिखा है- 'गुरु ग्रन्थ साहिब' का मंगलाचरण विष्णु स्तुति से प्रारम्भ होता है। हरमंदिर साहब में मूर्तियां थीं और वहां मूर्तिपूजा होती थी। दसों गुरुओं के विवाह वैदिक विधि से हुए थे। श्रीग्रन्थसाहिब में कहीं भी 'सत् श्री अकाल' या 'वाहि गुरुजी की फतह' शब्द नहीं आते। अभिवादन नमस्कार करना आता है।

9. फलित ज्योतिष : पूछिए

क. मेरे बच्चों के अंग्रेजी, हिसाब, विज्ञान, हिन्दी आदि अलग अलग विषयों में कितने कितने अंक आएंगे।

ख. ऐसी लाटरी का टिकट नम्बर बताएं जिसका इनाम दस लाख रुपए हो।

ग. चोरी, डकैती, हत्या आदि का पता पूछिए।

घ. वास्तविकता यह है कि कमजोर लोगों के कमजोर दिलों का लाभ उठाते हैं ज्योतिषी।

10. 'गर्व से कहो कि हम हिन्दू हैं'- 'हिन्दू' शब्द में गर्व करने लायक है ही क्या? जो कुछ गर्व की वस्तु है वह तो उस काल की है जब इस देश के वासियों को हिन्दू नाम से नहीं, 'आर्य' नाम से पुकारा जाता था। 'हिन्दू' नाम का जुड़ना तो हमारे पतन का आरम्भ ही सूचित करता है।

11. Mr. M. Roy wrote in 'The Statesman' that Winston Churchill warned Britain's Labour Government on the eve of Indian Independence "Power will go into the hands of rascals, rogues and freebooters …. They will fight among themselves and India will be lost in political squabbles"

Tribune 5-8-90.

12. पतन का कारण- जगन्नाथ पुरी मन्दिर में 7000 श्रद्धालुओं के लिए 3 लाख रुपए की लागत से भोजन बनाया गया। फिर उसे फेंक दिया गया

क्योंकि वहां के पण्डितों ने 18 घण्टे की बहस के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि 'भोग' एक अमेरिकावासी के, जो कि हिन्दू नहीं था, किसी पण्डित की कृपा से अन्दर आने के कारण भ्रष्ट हो गया।

थाईलैण्ड की राजकुमारी सिरींधोरन को इसलिए मन्दिर के अन्दर नहीं आने दिया गया था क्योंकि वह बौद्ध तो थी, पर भारत में जन्मी बौद्ध न थी। 1972 में प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी को इसलिए मन्दिर में नहीं जाने दिया गया था क्योंकि वह बेशक हिन्दू थी पर उसके पति पारसी थे।

13. शिव के सिर पर कहते हैं कि गंगा है, फिर उसी लिंग रूपी शिव पर लाखों टन जल उंडेलते हैं।

14. गुरु गोबिन्द सिंह के पाँच प्यारे-

1. लाहौर का दयाराम
2. दिल्ली का धर्मदास
3. द्वारिका का मोहकम चन्द
4. पुरी, उड़ीसा का हिम्मत राय
5. साहब चन्द

15. चरक शास्त्र- वीर्य, रज तथा जीव इन तीनों के गर्भाशय में संयुक्त होने का नाम गर्भ है। इससे वीर्य के साथ ही जीव का गर्भाशय में प्रविष्ट होना प्रमाणित है।

16. विवाह अथवा पाणिग्रहण- वेद में 'विवाह' शब्द साक्षात् उपलब्ध नहीं है। इसके स्थान पर 'हस्तं गृभ्णामि' है जिसका अर्थ है 'पाणिग्रहण' अर्थात् पति अपनी पत्नी का हाथ सारी आयु के लिए पकड़ता है।

17. कन्यादान- विवाह के अवसर पर कन्या को मिलने वाला सामान 'कन्या-धन' या 'कन्यादान' कहलाता है।

18. India Versus Others – At the start of decolonization in the 1950s and 1960s, India had a head start and was in advance of most others in the developing world - China, South Korea, all of South East Asia, West Asia, Africa and even Latin America. No longer. Today we trail behind most including Sub-Saharan Africa. 60 years late we find that we rank 127 in a field of 177 nations in our Human Development. Tribune – 6-12-07

19. सत्यार्थ प्रकाश- पाकिस्तान में सत्यार्थप्रकाश रखने पर 7 वर्ष की कैद की सजा है। दूसरे मुस्लिम देशों में सत्यार्थप्रकाश रखने पर 20 वर्ष की कैद की सजा है।

20. Indian Railways – When Dalhousie introduced Railways, there was opposition by Brahimins by saying that lower castes would sit next to them and thereby destroy Manu Dharam. There was also opposition by land owners by not surrendering their lands to Railways. Nevertheless, Dalhousie boldly handled the situation. Railways not only united the country from Kashmir to Kanya Kumari but also created social equality and Brahmins are now sitting alongwith untouchables.

21. Master Tara Singh– In March 1947 in Lahore he tore the Muslim League flag and raised Pakistan Murdabad slogans. The very next day Muslims started killing Sikhs in his home region of Pothohar.

22. राम 'आर्य' थे 'हिन्दू' नहीं - यह बात वाल्मीकि रामायण तथा तुलसीकृत रामचरित मानस कहते हैं। कृष्ण भी आर्य थे, हिन्दू नहीं- यह गीता और महाभारत बताते हैं।

23. हिन्दुओं की सामाजिक बुराईयाँ और अंधविश्वास-

1. जन्मना जातपात 2. अनेकेश्वरवाद 3. अवतारवाद 4. मूर्तिपूजा 5. तीर्थाटन 6. श्राद्ध तर्पण 7. फलित ज्योतिष 8. भाग्यवाद 9. तंत्र-मंत्र-यंत्र पूजा 10. बाल विवाह 11. सतीप्रथा 12. पशुबलि-नरबलि 13. अस्पृश्यता 14. नारी व शूद्र को वेद के पढ़ने-सुनने का निषेध 15. स्वर्ग-नर्क की कल्पना 16. अठारह पुराणों में आस्था 17. गीता को वेदों से ऊपर मानना।

24. मैं नास्तिक क्यों हूँ- भगत सिंह- (अक्तूबर 1930) प्रगति के समर्थक प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह अनिवार्य है कि वे पुराने विश्वास से सम्बन्धित हर बात की आलोचना करे, उसमें अविश्वास करें और उसे चुनौती दें। मैं पूछता हूँ उसने (ईश्वर ने) यह दुनिया बनाई ही क्यों जो साक्षात नर्क है, जो अनन्त और तलख बेचैनी का घर है? वह अंग्रेजों के मन में कोई ऐसी भावना क्यों नहीं पैदा कर देता कि वे हिन्दुस्तान को आजाद कर दें? वह

तमाम पूंजीपतियों के दिलों में परोपकार का ऐसा जज्बा क्यों नहीं भर देता कि वे उत्पादनों के साधनों पर अपने निजी स्वामित्व के अधिकार को त्याग दें और सम्पूर्ण मानव समाज को पूंजीवाद के बन्धन से मुक्त कर दें।

25. विश्व धर्म- 1893 में शिकागो में आयोजित प्रथम विश्व धर्म सम्मेलन के पश्चात् एक कमेटी बनाई गई- इस बात का निर्णय करने के लिए कि विश्व धर्म के लक्षण क्या हैं। निर्णय हुआ- जिसमें ये चार विशेषताएं हों-

1. समता- Equality
2. विश्वव्यापी भ्रातृभाव-Universal Brotherhood
3. सर्वाङ्ग पूर्ण विकास- Harmonious Development
4. वैज्ञानिक आधार - Scientific Base

इन कसौटियों पर केवल वेद ही खरा उतरता है।

26. Nehru's Non Violence – When Sir Robert Lockhart, the 1st Commander-in-Chief of the Independent India presented to Prime Minister Nehru a paper on the proposed size and plan of the Army, Nehru angrily retorted, "Rubbish, total rubbish", we don't need a defence policy or plan. We follow the philosophy of "non violence and the police is good enough to meet our security needs". When the Chinese attacked India in 1962, those policy makers and the enemies of the armed forces were shocked. I would like to thank the Chinese for awakening our leaders. Multan Singh Parihar – A retired solider, Tribune 14-9-08.

□□□□□

महत्त्वपूर्ण बातें- 3

1. भागवत पुराण- बोपदेव ने बनाया था। ऐसा उसने अपने बनाए 'हिमाद्रि' नामक ग्रन्थ में लिखा है। बोपदेव का भाई जयदेव बंगाल के राजा, जो 1170 में गद्दी पर बैठा था, का राजकवि तथा मित्र था। उसने 'गीतगोविन्द' और 'राधा विनोद' नाम की दो पुस्तकें संस्कृत में रची थीं। भागवत पुराण में राधा नाम का कहीं कोई उल्लेख नहीं है।

2. Nehru on Corruption – Before freedom was won, Jawahar Lal Nehru said that in Independent India heads of the corrupt would be hung on the lamp posts. H.K. Dua, Chief Editor, The Tribune 10-11-08.

3. पंजाब में गरीब आदमियों को शराब पिलाकर इकट्ठा किया टैक्स अमीर किसानों को मुफ्त बिजली के रूप में बांट दिया जाता है। शराब पिलाने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए जगह-जगह शराब के ठेके खोल दिए जाते हैं।

4. Helping hands are better than praying lips.

5. वेद मनुष्य को मनुष्य बनाने वाले ग्रन्थ हैं।

6. Mohammad Iqbal's grand father was Sahaj Ram Sapru. Sapru was an official in Kashmir during the administration of the Afghan Governor Azim Khan (1809-1819). Sapru had embezzled state funds and his guilt was established. He was given the choice of conversion to Islam or death. He chose conversion to Islam.

7. पारसी लोग- 1300 वर्ष पूर्व मुसलमानों के सताए 1000 लोग परसिया (इराक) से अपने सम्प्रदाय की रक्षा के लिए गुजरात (भारत) आए थे। वे पारसी कहलाए। वे शान्ति प्रिय हैं। उन्होंने सरकार से कभी कोई मांग नहीं रखी। उन्होंने धरने प्रदर्शन भी कभी नहीं किए। वे भारत में सबसे अमीर हैं। वे उद्योगपति हैं। उन्होंने गुजरात की भाषा और पहनावा अपना लिया है। दादा भाई नौरोजी, टाटा, गोदरेज पारसी हैं।

8. साधना- आत्मचिन्तन-अपनी कमियों की बाबत सोचना और उन्हें दूर

करना।

9- Great Minds discuss Ideas.
Smaller Minds discuss Events.
Small Minds discuss people.

10. भाग्यविधाता- ईश्वर हमारा भाग्य विधाता नहीं है। अच्छे बुरे कार्यों के द्वारा हम स्वयं ही अपने भाग्य को बनाते हैं।

11. सदाचार की सुरक्षा समाज की निगरानी से ही हो पाती है, क्योंकि मनुष्य स्वभाव से कहीं तक भी पतित हो सकता है।

12. बुद्धि से सिद्ध होने वाले कार्य उत्तम
भुजबल से सिद्ध होने वाले मध्यम
लुकछिप कर भाग दौड़ से किए जाएं वे अधम
जो सिर पर संकट डाल दे वे कार्य नीचतर।

13. सरदार पटेल के आगे अकालियों का गुस्सा और नाराजगी दो डग नहीं भर सकी। किन्तु ज्यों ही उन्होंने आँखें बन्द कीं अकालियों के चेहरे खिल उठे, उनके घरों में घी के चिराग जले। सरदार पटेल के मरने पर सिखों ने शोक नहीं मनाया, वरन मिठाइयां बांटीं।

14. दान, यज्ञ, स्वाध्याय, तप- ये गुण दुर्जनों में भी हो सकते हैं। सत्य, लोभहीनता, क्षमा, दया- मात्र सज्जनों में ही होते हैं।

15- Who is Mature –

- Mature is he, who is patient, who is willing to give up immediate pleasure in favour of the long term gain.
- Mature is he, who has the ability to settle differences without resentment or anger.
- Mature is he, who perseveres despite setbacks.
- Mature is he, who knows that life is too short to be wasted in prejudices, intolerance, hatred and revenge.
- Mature is he, who is humane and who responds to the needs of others with compassion.
- Mature is he, who has the humility to say I was wrong and the self control not to say 'I told you so' when he is proved right.
- Mature is he, who does not complain that the rose bush

has thorns but rejoices that it bears roses.

- Mature is he, whose deeds conform to his thoughts and words.
- Mature is he, who lives in the present without being shackled by the dead past or the unborn future.
- Mature is he, who strives to change things which he can and who lives in peace with things he cannot.
- Mature is he, who gently and constantly questions himself "Am I mature".

16. नारी–आद्य शंकराचार्य ने अपनी प्रश्नोत्तर रूपी कृति 'मणिरत्नमाला' में लिखा है –

क. विश्वासपात्र कौन नहीं? नारी

ख. नरक का एकमात्र द्वार कौन है? नारी। नारी पिशाची है और अमृत सा दिखने वाला विष है।

ग. इस संसार में त्यागने योग्य क्या है? स्वर्ण और नारी।

घ. शराब के समान कौन बेसुध रहने वाली है? नारी। उसका चरित्र जाना नहीं जा सकता।

'रामचरितमानस' में तुलसीदास जी लिखते हैं–

क. सुन्दर काण्ड में – शूद्र, गंवार, ढोल, पशु, नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।

ख.अरण्य काण्ड में–अधम ते अधम अति नारी। सकल कपट अवगुण खानी अर्थ– स्त्री नीचों से भी नीच है, पूरी तरह से कपटी है और दोषों से भरी है।

17. शूद्र– शंकराचार्य– (वेदान्त दर्शन– शांकर भाष्य)

इसमें शूद्रों का अधिकार नहीं है। वेद का सुनना उनके लिए मना है। इस पर भी यदि शूद्र वेद सुन ले तो सीसा (त्रपु), लाख (जातु) उसके कानों में भर दिया जाए। या वह वेदमन्त्र का उच्चारण कर ले तो उसकी जिह्वा काट ली जाए। यदि वेद को अपने जीवन में धारण कर ले तो उसके शरीर के टुकड़े टुकड़े कर दिए जाएं। वेद पर शूद्रों का अधिकार नहीं है, ऐसा नियम है। जबकि वेद का आदेश है– यथेमां वाणीं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः –– वेद मनुष्य मात्र के लिये हैं।

18. गान्धी– 2 जून 1940 को महात्मा गान्धी ने लार्ड लिनलिथगो को सलाह दी थी कि हिटलर की सेनाओं का प्रतिरोध ब्रिटेन को सिर्फअहिंसात्मक रूप से

करना चाहिए चाहे इसका मतलब उसका विनाश हो। गान्धी जी का यह सुझाव आत्म हत्या के सुझाव से कम न था।

19. कर्मफल- गिरे वही खोदे जो- एक औरत ने विषयुक्त खीर एक दौने में डालकर एक मांगने वाले बाबा को दी। खीर लेकर बाबा अपने डेरे की ओर जा रहा था। रास्ते में उसी औरत का चार साल का बेटा अपने पिता के साथ आ रहा था। बाबा से प्रसाद लेने की जिद्द करने लगा। बाबा ने वही खीर का दोना उसे दे दिया। खीर खा कर बच्चा मर गया। औरत पछताई और रोई- जैसी करनी वैसी भरनी।

20. हिन्दू को जो समझाता है यह उसी को अपना शत्रु मान लेता है और जो बहकाता है उसे दोस्त मान लेता है।

21. कोई भी मनुष्य self made नहीं होता। मनुष्य का पुरुषार्थ, समाज का सहयोग और ईश्वर की कृपा इसमें कारण होते हैं।

22. Our Jails are full of petty thieves and the grand thieves are running the country.

23. सत्य धर्म से रहित व्यक्ति से कभी सन्धि या समझौता नहीं करना चाहिए। भली भान्ति सन्धि कर लेने के बाद भी वह दुष्टता के कारण शीघ्र ही बिगड़ जाता है और समझौते से मुकर जाता है।

24. वन में, युद्ध में, शत्रु तथा जल व अग्नि के मध्य में, बड़े भारी समुद्र में, पर्वत की चोटी पर भी स्थित, सोए हुए, मस्त वा कठिन स्थिति में भी पहले किए हुए पुण्य प्राणियों की रक्षा करते हैं।

25. नैपाल में मन्दिरों में बलि प्रथा- 99 प्रतिशत मन्दिरों में बलिप्रथा है। दशहरा, दिवाली, बुद्ध जयंती, गणेश चतुर्थी और महा शिवरात्री पर्व बड़े स्तर पर मनाए जाते हैं। त्योहारों पर मुर्गा, बतख, भैंसा, बकरा व भेड़- इन पाँच प्राणियों का बलिदान देते हैं।

जबकि वैदिक धर्म में प्राणियों को बलि=भोजन (बलिवैश्यदेव यज्ञ) देने का विधान है, निरीह प्राणियों को मारना पाप है।

26. Be diplomatic with your enemies or foes and be pure hearted with your friends and others.

27. Abraham Lincoln – If I do good I feel good, if I do bad I feel bad, and that is my religion

28. Discovery of India : भारत की खोज- पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने 1944 में लिखी थी जो 1946 में छपी थी। उसमें क्या लिखा है- आर्य विदेशी आक्रमणकारी थे। रामायण-महाभारत घटना नहीं महाकाव्य हैं। बाबर का गुणगान है, राणा सांगा का नाम नहीं। अकबर का तीन पृष्ठों में वर्णन है। गजनवी का पराक्रम वर्णित है, सोमनाथ मन्दिर की चर्चा नहीं। अकबर बहादुर, साहसी, दयालु व गुणवान था और राणा प्रताप अभिमानी था, मानसिंह स्वाभिमानी था। सुभाषचन्द्र बोस का नाम नहीं। (इस पक्षपातपूर्ण पुस्तक को इतिहास पुस्तक नहीं माना जा सकता।)

29. पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर- जन्म 1820 बंगाल, मृत्यु 1891। उस समय समस्त देश में विशेषकर बंगाल में बाल-विवाह, वृद्ध विवाह तथा बहु विवाह की कुप्रथा जोरों पर थी। उन्होंने तीस हजार लोगों से हस्ताक्षर करवाकर 1856 में 'हिन्दू विधवा-पुनर्विवाह एक्ट' पास करवाया।

उनके वेदान्त के गुरु शंभुनाथ वाचस्पति ने अत्यन्त वृद्धावस्था में, ईश्वरचन्द्र के सख्त विरोध के बावजूद पुनः विवाह कर लिया। गुरु जी अपनी नई पत्नी से मिलाने के लिए अपने शिष्य को घर ले गए। उस मासूम बालिका वधू को देखकर ईश्वरचन्द्र रो पड़े और वापिस चल दिए। गुरु जी ने कहा 'भोजन करके जाना' परन्तु ईश्वरचन्द्र ने कहा 'मैं इस घर का जल भी ग्रहण न करूंगा' और तेजी से बाहर निकल गए। कुछ ही दिनों के बाद गुरु शंभुनाथ का देहांत हो गया और वह बालिका वधु विधवा हो गई।

30. If slaughter houses had glass walls, everyone would be vegetarian.

31. पुरुराव्णो देव रिशस्पाहि। (यजुर्वेद 8-27)

अर्थ - पति अपनी पत्नी की विधर्मी व व्यभिचारी पुरुषों से रक्षा करें।

कुकूननानां त्वा पत्मन्ना धूनोमि। (यजुर्वेद 8-48)

अर्थ - हे अधर्मी चित्त युक्त पति! तुझे मैं अन्य स्त्रियों से ठीक वैसे ही बचाती हूँ जैसे सूर्य रश्मियां (किरणें) सांसारिक पदार्थों को प्रदूषण से बचाती हैं।

32. जिहाद- जिहाद मुसलमानों के लिए गैर मुसलमानों को नष्ट करने के लिए अल्ला का आदेश है। अल्ला उन जिहादियों को जो गैर मुसलमानों को बिना किसी हिचक के मारते, काटते और लूटते हैं, जन्नत में भेजने का वायदा

करता है। कुरान के अनुसार गैर मुसलमानों को बन्दी बनाने की कोई व्यवस्था नहीं है। कुरान में कहा गया है कि बन्दियों को खत्म करना और लूट के माल का जिसमें गैर मुसलमानों की स्त्रियां भी शामिल हैं, भोग करना उचित है।

33. गैर मुसलमानों से दोस्ती रखने से मुसलमानों को अल्ला ने मना किया है। कुरान की सुरा 3 आयत 28 और सुरा 4 आयत 144 में अल्ला ने साफकहा है कि मुसलमान काफिरों से दोस्ती न रखें। अगर वे काफिरों से दोस्ती करते हैं तो अल्ला उन से दोस्ती न रखेगा।

34. कातलों और डकैतों के आगे हाथ जोड़ना कि वे ये काम छोड़ दें- सरकार का काम नहीं है। सरकार का काम तो उन्हें जहां भी वे हों, पकड़ना तथा पकड़कर दण्ड देना है। दण्ड भी ऐसा कि वे फिर से अपराध न कर सकें।

35. वाल्मीकि रामायण-उत्तर काण्ड

उत्तरकाण्ड मूल वाल्मीकि रामायण का अंग नहीं है। तुलसीदास जी ने 'रामचरितमानस' में कहीं भी सीता-परित्याग का जिकर नहीं किया। उत्तर काण्ड की भाशा, शैली और कथानक के वर्णन की गति युद्धकाण्ड तक के रामायण से सर्वथा भिन्न है।

शम्बूक वध पूरा प्रसंग काल्पनिक है। यहश्री राम के व्यक्तित्व, कर्तृत्व, सिद्धान्त और आदर्शों से मेल नहीं खाता। श्री राम जन्म की जाति पाति में विश्वास न रखते थे और न ही किसी को अस्पृश्य मानते थे। निषाद गुह जन्म से शूद्र थे लेकिन श्री राम के मित्र थे। शबरी जन्म से शूद्र थी, श्री राम ने उसका आतिथ्य स्वीकार किया।

महाभारत के रामोपख्यान पर्व की रामकथा में राज्याभिषेक के बाद श्री राम द्वारा सीता-परित्याग और शम्बूक वध का कहीं उल्लेख नहीं है।

□□□□□

महत्त्वपूर्ण बातें- 4

1. अपने दु:खों और पापों का बोझ दूसरे के कन्धे पर न डालें। दूसरों के दु:खों को हलका करने का प्रयत्न करें। अपने पापों को स्वीकार कर प्रायश्चित करें, ताकि पाप की वासनाएं नष्ट हों।

2. पूजा के समय बिल्ला बांधना- पूजा करते हुए घर में बिल्ला बाधा डालता था। इस कारण से बिल्ले को बांध देते थे, फिर पूजा करते थे। बाद में जब बिल्ला था ही नहीं तब भी कहीं से लाकर बिल्ला को बांधने लगे और तब पूजा करने लगे। यह है अंधपरम्परा।

3. Negative thinkers focus on problems. Positive thinkers focus on solutions.

4. Speak in such a way that others love to listen to you. Listen in such a way that others love to speak to you.

5. You are free to choose, but you are not free from the consequences of your choice.

6. The Hindus, wherever they may be, are afflicted with a strange psychic malady that inhibits them from standing up for their rights or highlighting atrocities committed against them. Moreover, those Hindus, who do so, are shouted down by their own brothers. India Tribune (USA), April 10, 2010.

7. Three filter test of Socrates –

Ist it true? Is is good? Is it useful?

8- India is the only country where reserves enjoy more benefits than the deserves.

9- Quotes of William Ewart Gladstone (1809 – 1898) Prime Minister of UK –

(a) So long as there is this book (Quran), there will be no peace in the World.

(b) Justice delayed is justice denied.

(c) Nothing that is morally wrong can be politically right.

(d) It is the duty of the government to make it difficult for people to do wrong, easy to do right.

(e) Here is my first principle of foreign policy; good governance at home.

(f) Good laws make it easier to do right and hard to do wrong.

(g) Be happy with what you have and are, be generous with both, and you won't have to hunt for happiness.

(h) No man ever became great or good except through many and great mistakes.

10- The truth can hurt for a while, but a lie can hurt forever.

11- Please don't bargain hard with small vendors. They do business not to build shopping malls but to Live and Eat.

12- It is better to walk alone, than with a crowd going in the wrong direction.

13. Do not speak about your –

money in front of a poor person,
health in front of a sick person,
power in front of a weak person,
happiness in front of a sad person,
freedom in front of a prisoner,
children in front of an infertile person,
mother or father in front of an orphan,
because their wounds cannot bear more.

14. हिन्दू धर्म की महानता पर 'अन्धविश्वास का साया'–

शान्ता कुमार, पूर्व मुख्यमंत्री, हिमाचल प्रदेश

गुलामी के कारण पतन नहीं हुआ, बल्कि पतन के कारण गुलामी आई। वास्तव में यह अन्धविश्वास और कुरीतियां ही थीं जिस कारण भारत का पतन हुआ। छुआछूत को धर्म मान लिया गया। अपने ही समाज के लाखों–करोड़ों लोगों को अछूत कहकर अपमानित किया गया। ऐसे अपमानित लोग ही धर्म–परिवर्तन करके मुसलमान बने और बाद में मातृभूमि का बंटवारा हुआ और पाकिस्तान बना। सच्चाई कड़वी है पर सच्चाई यही है कि पाकिस्तान जिन्ना ने नहीं बनाया, इन कोरे कर्मकाण्डी तथा कथित ब्राह्मणों ने बनाया जिन्होंने धर्म के नाम पर करोड़ों हिन्दुओं को तिरस्कृत व अपमानित किया और अछूत बनाया। बाद में उसी वर्ग के लोग ईसाई बने।

15. सात फेरे-

1. We promise to always remain together in happiness and sorrow.
2. We promise to cherish respect, be gentle and caring each other.
3. We promise to move forward as equals and as best friends by respecting each other individually.
4. We shall always maintain the integrity of the family.
5. We promise to share responsibilities in caring our children and our elders.
6. We shall strive to ensure each other's well being and good health.
7. We shall jointly fullfil our responsibilities towards our respectrive families.

16. कांटा पैर में चुभता है तो आँसू आँख से आता है।

17. Forgive others, not because they deserve forgiveness, but because you deserve peace.

18. समय या अवसर (opportunity) के बारे में सुप्रसिद्ध है कि इसके सिर के आगे की ओर बाल होते हैं, पीछे से यह गंजा है। इसलिए समय को आगे से ही पकड़ लिया जाए, निकल जाने पर पछताना ही पड़ता है, यह हाथ में नहीं आता।

19 Don't argue with idiots because they will drag you down to their level; and never argue with a fool; onlookers may not be able to tell the difference.

20. विवेक- वह शक्ति जो ठीक और गलत में अन्तर कर सके। गणेश की प्रतिमा दूध पीए- विवेकी व्यक्ति स्वीकार न करेगा।

21. परमात्मा को मल-मूत्र की दुर्गन्ध क्यों नहीं आती? परमात्मा संसार का रचयिता है, भोक्ता नहीं। वह सुगन्ध-दुर्गन्ध को जानता है, पर भोग नहीं करता। परमात्मा के आँख, कान, नाक आदि अंग भी नहीं हैं।

22. चेतना और ज्ञान- गर्भ में बच्चे में चेतना है, पर ज्ञान नहीं। नींद में भी मनुष्य में चेतना होती है, पर ज्ञान नहीं। मरते समय व्यक्ति में चेतना होती है, ज्ञान नहीं।

23. True, the attacks are shocking and revulsive, but they are not cowardly acts. A Jihadi kills because he is convinced that it is his duty to kill kafirs and he is even ready to die in doing what he feels is right. This shows courage. All those terrorists are young. It is not normal, not easy to risk one's life in killing others, unless he is absolutely convinced that the benefit is greater than the cost.

24. भाई परमानन्द- मैं समझता हूँ कि गान्धी जी अथवा पण्डित जवाहरलाल द्वारा दिलाई हुई स्वतन्त्रता हिन्दू धर्म के लिए वर्तमान गुलामी से कहीं अधिक त्रासदायी सिद्ध होगी क्योंकि आर्यसमाज की स्वतन्त्रता का आदर्श इन कांग्रेसी नेताओं की स्वतन्त्रता के आदर्श से बिल्कुल प्रतिकूल है। यह कांग्रेसी वैदिक धर्म को मिटाकर हिन्दू जाति की भस्म पर स्वतन्त्रता का भवन स्थापित करना चाहते हैं। यदि वैदिक धर्म और हिन्दू जाति न रहे, तो मेरी समझ में नहीं आता कि आर्यसमाजी उनकी राजनीति के साथ कैसे सहानुभूति रख सकते हैं। हैदराबाद की घटना अभी अभी हमारे सामने हुई है। कांग्रेस ने आर्य समाज के आन्दोलन का विरोध किया और आदि से अन्त तक विरोध ही रहा।

25. गाय का दूध- कैनेडा के सेंट माईकल हस्पताल की शोध का परिणाम -गाय का दूध पीने वाले बच्चों की लम्बाई औसत लम्बाई से ज्यादा होती है। अन्य पशुओं का दूध पीने वाले बच्चों की लम्बाई औसत लम्बाई से कम होती है। (अमर उजाला- जून 2017)

26- Vivekanand - A beef eater – Rev. Dr. John Henry Barrows (1847-1902) was an American clergy and was the president of the Parliament of the World's Religions (1893).

Dr. Barrows told that he observed Swami Vivekananda eating beef in the United States. He also told, right after the close of the first session of the Parliament of the World's Religions, he took Vivekanand and some other participants to a restaurant in the basement of the Art Institute, there Swami Vivekanand preferred to eat beef. (The outlook 17 July 1897).

27- Albert Einstein – A calm and modest life brings more

happiness than the constant pursuit of success combined with constant restlessness.

28. ए बी सी (ABC) के पत्रकार बिल रेडेकर पेशावर (पाकिस्तान) के पास एक प्रसिद्ध मदरसे में गए। वहां पर 60 लड़के फर्श पर बैठे कुरान पढ़ रहे थे। बिल रेडेकर लिखता है – 'मैंने उन छात्रों से पूछा कि स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद उनमें से कौन डॉक्टर या इंजिनीयर बनना चाहेगा। केवल दो लड़कों ने हाथ उठाया। फिर मैंने पूछा कि कौन जिहाद के लिए लड़ना चाहेगा। तो सबने हाथ उठा दिया।' (आर्य जगत् 10-16 जून 2018)

□□□□□

मनुष्य की परिभाषा

'मनुष्य उसी को कहना है कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दु:ख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उन की रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्त्ती सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हों तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उस को कितना ही दारुण दु:ख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।'

महर्षि दयानन्द

(स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश)

महत्त्वपूर्ण बातें- 5

1. फलित ज्योतिष सत्य या असत्य-

पहला उदाहरण- पण्डित सुधाकर द्विवेदी काशी के सबसे बड़े ज्योतिषी थे। वे काशी के संस्कृत कालिज के ज्योतिष शास्त्र के मुख्याध्यापक थे। उनकी पुत्री छः मास में विधवा हो गई। उनका ज्योतिष पर विश्वास उठ गया। काशी के टाऊन हाल में ज्योतिष के विरुद्ध व्याख्यान दिया। सभी ज्योतिषियों को चुनौती दी। उन्होंने कहा कि मैं इसको खेल समझता हूँ।

दूसरा उदाहरण- बलदेव दास बिड़ला को ज्योतिषी ने बताया कि उनकी कुल आयु 55 वर्ष है- उस समय वे 46 वर्ष के थे। जब 55 के हो गए तब फिर ज्योतिषी से पूछा। उसने कहा 65 वर्ष में मर जाएंगे। फिर ज्योतिषी से बात करते हुए कह दिया- 'ज्योतिषी जी! आप पत्री देखना जानते हैं, कर्म नहीं जानते।'

2. नैमितिक और स्वाभाविक- आग के संयोग से जल में उष्णता आती है वह नैमितिक है। जो आग में उष्णता और दाहकता है वह स्वाभाविक है।

3. I wonder when the civilized world will wake up to the dangers of treating criminal cults as religions deserving equal treatment.

4. महर्षि दयानन्द ने पण्डित मोहनलाल पण्ड्या से कहा था- 'जब तक समस्त देशवासी एक धर्म के अनुयायी, एक भाषा के बोलने वाले और एक ही प्रकार के आचार-विचार एवं व्यवहार को धारण कर एक ही लक्ष्य की पूर्ति के लिए सर्वात्मना निश्चय नहीं कर लेते तब तक स्वदेश की एकता और इसकी सर्वांगीण उन्नति स्वप्न मात्र रहेगी।

5. **कृते प्रतिकृतिं कुर्यात् हिसंने प्रतिहिंसनम्।**

तत्र दोषो न पतति दुष्टे दुष्टं समाचरेत्।। (चाणक्यनीति 17-2)

अर्थ- जो जैसा करे उसके साथ वैसा करना चाहिए, मारने पर मारना चाहिए। इसमें अपराध नहीं। दुष्ट के साथ दुष्टता का आचरण करे।

6. **समानं जरामरणादिजं दुःखम्** (सांख्य दर्शन)-

सभी जीवों में वृद्धावस्था और मरण आदि से उत्पन्न दुःख समान हैं। भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी आदि से सभी जीव दुःखी होते हैं। जितना जीव क्षुद्र होता है, उतना वह कष्ट झेलने में असमर्थ होता है और शीघ्र मर जाता है।

7. **मनुर्भव**- हे मनुष्य, तू मनुष्य बन। बन्दर का बच्चा बन्दर ही होता है। उसे सिखाने की जरूरत नहीं। परन्तु मनुष्य का बच्चा मनुष्य बनाने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है। इसलिए वेद ने कहा- मनुर्भव।

8. औषधियां माता-पिता के समान हमारी सेवा करती हैं। अतः हमें भी उन्हें व्यर्थ नष्ट न होने देना चाहिए। हमें वे कारण छोड़ देने चाहिएं जिनसे हम अस्वस्थ हो जाते हैं।

9. जिस प्रकार आकाश से वर्षा की धारा भूमि पर प्रवाहित होती है उसी प्रकार दिव्य विचार मनुष्य के मानस पटल पर प्रवाहित होते हैं।

10. Luxury and Lies have huge maintenance costs.
Truth and Simplicity are self maintained without any cost.
Honesty does not always pay, but dishonesty always costs.

11. गुरु गोलवलकर ने पंजाब के हिन्दुओं को अपनी भाषा पंजाबी और सिखों को स्वयं को हिन्दू मानने का उपदेश दिया था। इस प्रकार संघ ने पंजाब में हिन्दी और संस्कृत को फांसी लगाने के वारंट पर हस्ताक्षर तो कर दिए, पर सिखों को हिन्दू कहलवाने में असफल रहे।

12. **सत्यार्थप्रकाश 13वां समुल्लास**-

क. ईश्वर का न कोई पुत्र, न वह किसी का बाप है क्योंकि वह किसी का बाप हो तो किसी का श्वसुर, श्याला सम्बन्धी आदि भी हो।

ख. जैसे दूसरे के पिये मद्य, भांग, अफीम खाये का नशा दूसरे को नहीं प्राप्त हो सकता वैसे ही किसी का किया हुआ पाप किसी दूसरे के पास नहीं जाता।

ग. जो परमेश्वर भी नियम को उल्टा पुल्टा करे तो उसकी आज्ञा को कोई न माने और वह भी सर्वज्ञ और निर्भ्रम न रहे। ईश्वर के सब काम बिना भूल चूक के होते हैं, क्योंकि वह सर्वज्ञ है।

घ. कोई मनुष्य क्षण में प्रसन्न और क्षण में अप्रसन्न होता है। उसकी प्रसन्नता भी भयदायक होती है।

ङ. जो ईश्वर से जगत् बना होता तो ईश्वर के सदृश गुण-कर्म-स्वभाव वाला होता। जगत् उपादान कारण परमाणु आदि से बना है।

च. मनुष्य का आत्मा सत्य असत्य का निर्णय करने में समर्थ होता है। जितना अपना पठित व श्रुत है उतना निश्चय कर सकता है।

छ. जो यह खतना करना ईश्वर को अभीष्ट होता तो उस चमड़े को आदि सृष्टि से बनाता ही नहीं। जो यह बनाया गया है, वह रक्षार्थ है। जैसे आँख के ऊपर का चमड़ा। यह गुप्त स्थान अति कोमल है। जो उस पर चमड़ा न हो तो एक कीड़ी के भी काटने और थोड़ी सी चोट लगने से बहुत दुःख हो और लघुशंका के पश्चात् कुछ मूत्रांश कपड़ों को न लगे इत्यादि बातों के लिए है। इसे काटना बुरा है।

13. **साथ रहने में लाभ**- जलती अंगीठी से एक कोयला बाहर निकाल लो। बाहर निकलते ही कोयला काला पड़ गया जो पहले दमकता हुआ लाल था, जब अंगीठी में था।

14. दुष्ट व्यक्ति ओला की तरह होता है। ओला फसल को नष्ट करता है और स्वयं भी नष्ट हो जाता है।

15. A good administrator cannot be Gandhivadi. Only a fool can be Gandhivadi.

16. जो राजा सज्जनों को सम्मानित नहीं करता और दुर्जनों को दण्डित नहीं करता, वह नष्ट हो जाता है।

17. मनुष्य जिस बात को मन में मानता है उसे वाणी द्वारा प्रकट करता है और जैसा वाणी द्वारा बोलता है वैसा कर्म करता है, जैसा कर्म करता है वैसा ही बन जाता है।

18. दान : सुपात्र को या कुपात्र को : गाय घास खाती है और दूध देती है, सांप दूध पीता है और जहर उगलता है।

19 During British Rule, India was not considered a Corrupt country.

20. जब भारत में एक महिला आत्महत्या कर लेती है तब निर्दोष को सजा दी जाती है। लेकिन वही जब जीवित होती है और न्याय के लिए लड़ती है उसे केवल परेशान किया जाता है। यही भारत की वास्तविकता है।

21. शिया, सुन्नी में धार्मिक विषयों में मतभेद हो सकता है। परन्तु काफिरों

के प्रति व्यवहार में उनमें कोई भेद नहीं है।

22. तुफैल चतुर्वेदी : गान्धी के आने से पहले भारतीयों में गान्धी वाली गलत अहिंसा न थी। भारतीय हिन्दू मुसलमानों से बराबरी पर लड़े थे। गान्धी की स्त्रैण मानसिकता थी, वह कायर था।

23. कहा जाता है कि कुरान तो सही है पर बन्दे खराब हैं। वास्तविकता इसके उलट है।

24. Sikhism- defined by Macauliffe: - It prohibits idolatory, hypocrisy, caste exclusiveness, the concremation of widows, the immurement (बन्द करके रखना) of women, the use of wine, tobacco, smoking, infanticide (बच्चों को मारना), slander (मिथ्यारोपण) pilgrimage to the sacred rivers and tanks of the Hindus.

25. मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो। – महाभारत

अर्थ– मन ही मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है।

26. हिन्दू नाम विक्रम संवत् की सातवीं शताब्दी के पूर्व के ग्रन्थों में नहीं मिलता है।

27. मधु किश्वर– RSS, BJP intellectuals को दुतकार के रखती है। कांग्रेस उन्हें पुचकार के रखती है।

28. ईश्वर प्राप्ति– गर्म लोहे को पकड़ने से अग्नि और लोहा दोनों पकड़ में आते हैं। जिस प्रकार अग्नि और लोहे की एकता है उसी प्रकार ईश्वर और जीव की एकता है। एक की प्राप्ति में दोनों की प्राप्ति होती है। जैसे लोहे के आश्रित अग्नि की प्राप्ति होती है वैसे ही जीव के आश्रित ईश्वर की प्राप्ति होती है।

29. अमन की किताब कुरान में 170 बार काफिरों को कत्ल करने का आदेश है।

30. चरक संहिता– शरीरस्थान – अध्याय 4

शुक्रशोणितजीवसंयोगे तु खलु कुक्षिगते गर्भसंज्ञा भवति।

अर्थ– वीर्य, रज तथा जीव का संयोग होकर कुक्षी में प्राप्त होने का नाम ही गर्भ है।

□□□□□

महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825-1883)

महर्षि दयानन्द सरस्वती वर्तमान युग में वैदिक ज्ञान के प्रथम उद्‌बोधक थे। ईश्वर, जीव, प्रकृति, धर्म-अधर्म तथा सभी मत मतान्तरों के वास्तविक स्वरूप को जानने के लिए उन द्वारा लिखित ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' पढें। सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में प्रसिद्ध देशभक्त लाला हरदयाल के विचार- 'इस महान ग्रन्थ के अध्ययन से मेरी विचारधारा बदल गई है। सोई हुई जाति के स्वाभिमान को जाग्रत करने वाला यह ग्रन्थ अद्वितीय है।' वीर सावरकर की सत्यार्थप्रकाश पर टिप्पणी- 'हिन्दू जाति की ठंडी रगों में गर्म खून का संचार करने वाला यह ग्रन्थ अमर रहे। सत्यार्थप्रकाश की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब की शेखी नहीं मार सकता।'

महर्षि दयानन्द ने डंके की चोट से ऐलान किया कि आर्य लोग जो आजकल हिन्दू कहे जाते हैं, भारतवर्ष के ही मूल निवासी हैं। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि आर्य भारतवर्ष में कहीं बाहर से आकर बसे थे। इस देश का सबसे पहला नाम आर्यावर्त था अर्थात् आर्यों का देश। उससे पहले इसका कोई और नाम न था।

स्वामी जी हिन्दुओं की सभी कमियों और कमजोरियों के लिए पुराणों को जिम्मेदार मानते थे। वे पुराणों को महर्षि वेदव्यास जी की रचना नहीं मानते। वे लिखते हैं- 'जो अठारह पुराणों के कर्त्ता व्यास जी होते तो उनमें इतने गपौड़े न होते क्योंकि व्यास जी बड़े विद्वान, सत्यवादी, धार्मिक योगी थे। पुराणों ने ही मूर्तिपूजा को प्रोत्साहित किया है और आर्यत्व की कब्र खोदी है। अवतारवाद, जन्म पर आधारित जातिप्रथा, सतीप्रथा, विधवा विवाह का निषेध आदि अनेक ऐसी कुरीतियां जिनके कारण हिन्दू बदनाम हैं, सबको पुराणों में मान्यता है। पुराणों की ऐसी मान्यताएं वेदविरुद्ध हैं। यदि पुराण और पौराणिक विचार हिन्दुओं में न होते तो ईसाईयों और मुसलमानों को हिन्दुओं के विरोध में कहने को कुछ भी न मिल पाता और न ही इतनी आसानी से हिन्दू मुसलमान और ईसाई बनते।'

□□□□□

लेखक का परिचय

लेखक कृष्ण चंद्र गर्ग ने पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ से गणित में बी ए आनर्ज और एम ए किया। फिर डी ए वी कॉलेज अबोहर, दयानन्द कॉलेज हिसार तथा मोदी डिग्री कॉलेज पटियाला में गणित के प्रोफेसर के तौर पर काम किया। फिर अमेरिका जाकर कुछ पढ़ाई की और कुछ समय सिटी कॉलेज शिकागो में तथा गवर्नर स्टेट यूनिवर्सिटी में गणित पढ़ाया। वे कुल 13 वर्ष तक अमेरिका में रहे। अब वे पंचकूला, हरियाणा में रह रहे हैं।

लेखक की अन्य कृतियां –

आर्य मान्यताएं – यह पुस्तक 96 पृष्ठ की है। इसे आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट दिल्ली वाले छाप रहे हैं। आर्य जगत में यह पुस्तक काफी प्रसिद्धि पा चुकी है। अब तक इसकी एक लाख तीस हजार से अधिक प्रतियां बिक चुकी हैं। इसमें आर्यों की बहुत सी मान्याताओं का संक्षेप में तथा सरल भाषा में वर्णन किया गया है।

सत्य की खोज – इस पुस्तक में 128 पृष्ठ हैं। यह पुस्तक 25 लेखों का संग्रह है। इसे सूर्य भारती प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली वालों ने प्रकाशित किया है। इसमें भारत में प्रचलित बहुत सी ऐसी गलत मान्यताओं को सरल और स्पष्ट भाषा में सप्रमाण दर्शाया गया है जो भारत को विनाश की ओर ले जाने के लिए जिम्मेदार हैं। सभी राष्ट्रभक्तों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए।